RNI No. UPHIN/2000/3766 ISSN No. 2581-3528 ₹:20

केशव संवाद

आश्विन-कार्तिक, विक्रम सम्वत् 2079 (अक्टूबर-2022)

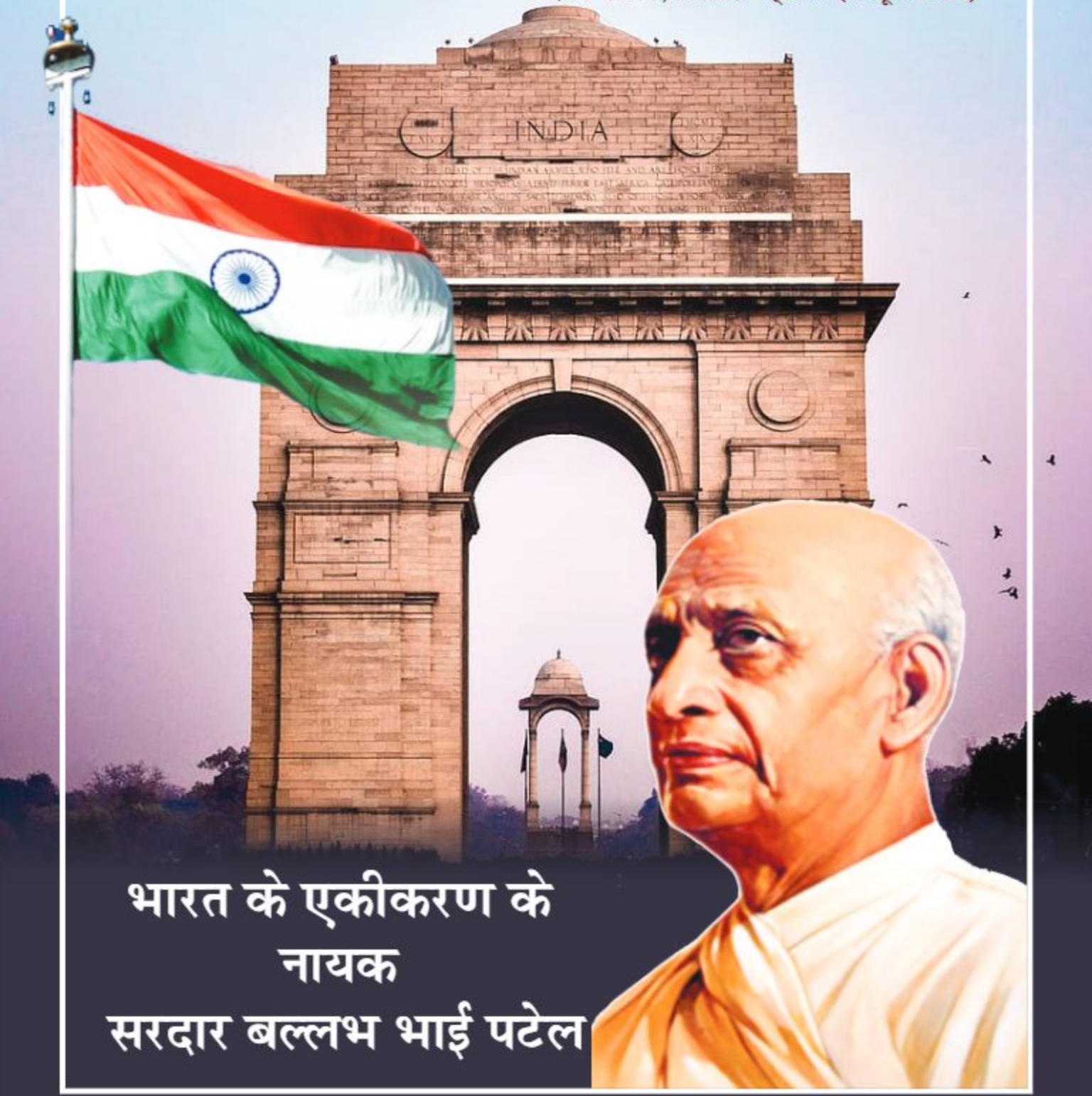

भारत के एकीकरण के नायक सरदार बल्लभ भाई पटेल

दीपावली के पावन पर्व के अवसर पर
हार्दिक शुभकामनाएं

V.K. INTERNATIONAL

♦Air Freight ♦Shipping ♦Consolidators
202, Bharat Chambers, 70-71
Scindia House, Connauaght Place
New Delhi-110001
TEL : 41514274,65544274, Mob. 9899869757
Website : www.vkintpl.net
E-mail : rajeev4ind@gmail.com

केशव संवाद

RNI No. UPHIN/2000/3766

ISSN No. 2581-3528

अक्टूबर, 2022
वर्ष : 22 अंक : 10

अणंज कुमार त्यागी
अध्यक्ष
प्रे. शो. सं. न्यास

संपादक
कृपाशंकर

कार्यकारी संपादक
डॉ. प्रियंका सिंह

संपादक मंडल
डॉ. प्रदीप कुमार, डॉ. अखिलेश मिश्र, डॉ. नीलम कुमारी, प्रो. अनिल निगम, डॉ. मनमोहन सिंह, अनीता चौधरी, अनुपमा अग्रवाल, अमित शर्मा

पृष्ठ संयोजन
वीरेंद्र पोखरियाल

संपादकीय कार्यालय
प्रेरणा शोध संस्थान न्यास
सी-56/20 सेक्टर-62, नोएडा -201301
फोन न. 0120 4565851, 2400335
ईमेल : keshavsamvad@gmail.com
वेबसाइट : www.premasamvad.in

स्वामी पंकज कुमार की ओर से मुद्रक/प्रकाशक सुखवीर प्रकाश द्वारा चंद्र प्रभु ऑफसेट प्रिंटिंग वर्क प्रा. लि. नोएडा से मुद्रित तथा केशव भवन 105, आर्यनगर सूरजकुंड रोड मेरठ से प्रकाशित

इस पत्रिका में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। संपादक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है। सभी विवादों का निपटारा मेरठ की सीमा में आने वाली सक्षम अदालतों/फोरम में मान्य होगा। संपादक

विषय सूची

राष्ट्रीय गौरव के लिए सक्रिय पहल जरूरी	– प्रो. अनिल कुमार निगम	05
पदचिन्ह जिनका पता बताते हैं	– नरेन्द्र भदौरिया	06
रियासतों के एकीकरण में पटेल की भूमिका	– डॉ. प्रदीप कुमार	08
श्री कृष्ण जन्मभूमि कटरा केशव देव मंदिर मथुरा	– प्रो. (डॉ.) हरेन्द्र सिंह	10
महान सनातन भारतीय संस्कृति ही इस देश...	– प्रहलाद सबनानी	12
पुस्तक समीक्षा	– डॉ. मनमोहन सिंह	14
प्राचीन मंदिरों में विज्ञान	– प्रमोद भार्गव	16
ज्योतिष के पितामह: वराहमिहिर	– अमित शर्मा	19
बैडमिन्टन की अपराजिता गोल्डन गर्ल आदित्या	– डॉ. नीलम कुमारी	20
विदेशी धरती पर क्रांतिकारियों के सबसे बड़े...	– विष्णु शर्मा	22
विश्व को भारत की अनुपम देन : आयुर्वेद	– डॉ. प्रताप निर्भय	24
अमृत महोत्सव में आजादी के अमृत मायने	– डॉ. पूनम सिंह	26
उत्सवों की समाज निर्माण में भूमिका	– अनुपमा अग्रवाल	28
आर्थिक महाशक्ति बनता भारत	– आशीष कुमार	29
व्यस्त और रंगीन सांस्कृतिक गतिविधियों ...	– नीलम भागी	30
भारतीय संविधान के सुविधाजनक व्याख्यान ...	– मोहित कुमार	32
'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावना पर राष्ट्रवादी...	– डॉ. वेद प्रकाश शर्मा	33
मीडिया सुर्खियां	– प्रतीक खरे	34

पाठकगण पत्रिका के बारे में अपने सुझाव एवं प्रतिक्रिया, 'संपादक के नाम पत्र' शीर्षक से ई-मेल (keshavsamvad@gmail.com) के माध्यम से भेज सकते हैं। चुने हुए पत्रों को पत्रिका के अगले अंक में प्रकाशित किया जायेगा।

ISSN No. 2581-3528

संपादकीय.....

या देवी सर्वभूतेषु शक्ति-रूपेण संस्थिता। नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः।।

जो देवी प्राणियों में शक्ति के रूप में विद्यमान हैं उन्हें बारंबार प्रणाम है। सिद्धि के प्रतीक शारदीय नवरात्र का हिंदू सनातन संस्कृति में एक अलग महत्व है। सनातन सांस्कृतिक दृष्टि में नारी को विलक्षण शक्ति का पर्याय माना गया है, वहीं प्रकृति को मां का स्वरूप। पृथ्वी, आकाश, जल, अग्नि और वायु की पूजा-अर्चना हमारे संस्कारों में निहित है और यही कारण है कि हम प्रत्येक उत्सव पूरे हर्षोल्लास से मनाते हैं। आश्विन और कार्तिक का महीना उत्सव का महीना है। दशहरा, दीपावली, गोवर्धन पूजा, भाईदूज, सूर्योपासना का प्रसिद्ध छठ पर्व - सब इसी माह में पडे हैं। सनातन संस्कृति के ये उत्सव न सिर्फ हमारे अंतस् को प्रफुल्लित करते हैं बल्कि समरसता का ऐसा ताना-बाना बुनते हैं जो पूरे समाज को जोड़ कर रखने का काम करता है। निश्चित रूप से सनातन धर्म का हर पर्व निश्चल चिंतन, अध्यात्म व ओज से परिपूर्ण होता है और जिसका अपना वैज्ञानिक आधार भी है।

नारी शक्ति को समर्पित नवरात्रि से इस उत्सव श्रृंखला की शुरुआत होती है। शक्ति स्वरूपा मां दुर्गा करुणा और प्रेम की प्रतिमूर्ति है जिन्हें हिंदू सनातन संस्कृति में ऊर्जा का प्रतीक भी माना गया है। भारतीय संस्कृति का यह पावन पर्व सभी शक्तियों का संचयन है जिसे मां दुर्गा के रूप में पूजा जाता है। मां दुर्गा के अनेकों रूपों के द्वारा महिषासुर का वध संभव हो पाया जिससे सद प्रवृत्तियों की रक्षा हो पाई इसलिए इसे असद प्रवृत्तियों के नाश का प्रारंभ भी मान सकते हैं। यह दैवीय शक्ति को आत्मसात करने का पर्व है जिससे अंतस् स्वतः ही पवित्र हो जाता है और इसकी सकारात्मकता से जीवन को एक नई दिशा, एक नई ऊर्जा प्रदत्त होती है। योग शक्ति मां दुर्गा प्रेम वात्सल्य और ममता की भावना को पोषित करती हैं साथ ही दुष्ट प्रवृत्तियों का विनाश करने के लिए खप्पर धारणी भी है।

दीपावली प्रकाश का उत्सव है। हम अपने भीतर छाये अमावस से अंधियारे को धर्म और ज्ञान के प्रकाश से आलोकित कर सकते हैं। सनातन धर्म के लोगों के लिए गोवर्धन पूजा अत्यंत महत्वपूर्ण त्यौहारों में से एक है क्योंकि इसमें गाय माता की पूजा की जाती है। गाय की महत्ता हमारे वेदों ने भी बतायी है। मां के दूध के बराबर ही गाय के दूध की पौष्टिकता वैज्ञानिकों ने भी मानी है। यहीं कारण है कि गाय को हमारी संस्कृति में माता माना गया है। भाई-दूज का पर्व हमारी संस्कृति में रिश्तों की पवित्रता का द्योतक है। छठ जैसा पर्व हमारी संस्कृति में सामाजिक समरसता की महत्ता बताता है। साथ ही ये बताता है कि प्रकृति स्वयं में ही पूज्य है।

हमारे पर्व-त्योहारों के द्वारा हम सभी ऊर्ध्वमुखी संसाधनों के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करते हैं। हमारी संस्कृति की दृढ़ता ही उसका सामाजिक ताना-बाना है और जब यह आध्यात्मिकता और भावात्मकता से बुना गया हो तो वह स्वतः ही विचारशील और प्रगतिशील हो जाता है। भारत सरकार के द्वारा राजपथ को कर्तव्य पथ करना स्वयं ही यह दर्शाता है कि भारतीय संस्कृति व सामाजिक परिदृश्य कितना समर्पित और निष्ठावान है। क्योंकि शब्दों से ही भाव का पता चलता है और शब्दों से ही कर्तव्य बोध का एहसास भी होता है। यह मात्र नाम का परिवर्तन नहीं अपितु भारतीय संस्कृति के संवर्धन व समर्पण की गाथा है जिसे आने वाली पीढ़ी में हस्तांतरित करना आवश्यक है। आइए हम सब मिलकर अधर्म पर धर्म की जीत का उत्सव मनाये और अपने अंतस को प्रकाशित करें।

संपादक

ISSN No. 2581-3528

राष्ट्रीय गौरव के लिए सक्रिय पहल जरूरी

प्रो (डॉ) अनिल कुमार निगम

"पराधीन सपनेहुं सुख नाहीं"

कहने का आशय है कि पराधीनता में कुछ भी सुख नहीं मिलता। हर व्यक्ति पराधीनता के बंधन से मुक्त होकर अनंत आकाश में उड़ना चाहता है। आज भारत को स्वतंत्र हुए 75 साल गुजर चुके हैं। हम आजादी का अमृत महोत्सव मना रहे हैं। लेकिन कई बार ऐसा आभास होता है कि मानसिक तौर पर हम गुलामी की बेड़ियों से जकड़े हुए हैं और हमारा मन मस्तिष्क आज भी आजाद नहीं हो पाया है। हम पर विदेशी आक्रांताओं– मुगलों, पुर्तगालियों और अंग्रेजों का खासा प्रभाव जमा हुआ है। यही कारण है कि हमारे देश की राजधानी सहित अनेक शहरों, कस्बों, गांवों और सड़कों के नाम विदेशी आक्रांताओं के नाम पर अब तक चल रहे हैं।

हालांकि हाल ही में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने राजपथ का नाम कर्तव्य पथ रखकर यह संकेत अवश्य दे दिया है कि हमें गुलामी की मानसिकता से बाहर निकलना होगा और समृद्ध भारतीय संस्कृति और ज्ञान परंपरा के अनुरूप राष्ट्रीय प्रतीकों को स्थापित करना होगा। इसके पहले प्रधानमंत्री ने कोच्चि में आइएनएस विक्रांत को नौसेना को सौंपने के साथ ही भारतीय नौसेना के ध्वज को भी उसके औपनिवेशिक अतीत से मुक्ति दिलाई। नए ध्वज से गुलामी के प्रतीक सेंट जार्ज क्रास को हटाकर राष्ट्रीय चिन्ह को उस नीले अष्टकोण में जड़ा गया, जो कभी शिवाजी महाराज की नौसेना का चिन्ह था।

ध्यातव्य है कि प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने इसी वर्ष स्वतंत्रता दिवस पर देशवासियों से उपनिवेशवादी मानसिकता त्यागने की अपील की थी। निःसंदेह, प्रधानमंत्री का यह आह्वान आजादी के अमृत काल में लिए गए पांच प्रणों में से एक–मानसिक दासता से मुक्ति को दर्शाता है।

यह विडंबना है कि भारत के स्वतंत्र होने के बावजूद भारतीय इतिहास के लेखन में मार्क्सवादी इतिहासकारों का बहुत अधिक प्रभाव रहा। मार्क्सवादी चिंतन प्रभाव के ही चलते शैक्षणिक संस्थानों में ऐसी मानसिकता से ओत–प्रोत कथित लेखकों की एक जमात अभी भी है। ये ऐसे लोग हैं जो विदेशी आक्रांताओं और अंग्रेजी राज को देश के लिए वरदान समझते हैं। आजादी के बाद पत्रकारों की भूमिका भी अपेक्षा के अनुरूप नहीं रही। उन्होंने सरकारों से ये सवाल नहीं किए कि आखिरकार देश भर में शहरों, सड़कों और कस्बों के नाम इन आक्रांताओं के नाम पर क्यों रखे गए? इतिहास लेखन के दौरान विदेशी आक्रांताओं को खूब महिमामंडित किया गया जबकि भारतीय इतिहास के नायकों की चर्चा तक नहीं की गई। हास्यास्पद यह है कि

इतिहास में भारत की खोज वास्कोडिगामा द्वारा की गई बताई जाती है।

उल्लेखनीय है कि वर्ष 2014 के बाद सरकार ने कुछ अच्छे काम किए। भारत की राजधानी में औरंगजेब रोड का नाम बदलकर पूर्व राष्ट्रपति एपीजे अब्दुल कलाम के नाम पर रखा गया। राजाहमुंद्री का नाम बदलकर राजामहेंद्रवर्मन किया गया। यह बदलाव 11वीं सदी के शासक राजामहेंद्रवर्मन के सम्मान में किया गया। अप्रैल 2016 में गुड़गांव का नाम बदलकर गुरुग्राम किया गया। महाभारत के गुरु द्रोणाचार्य के नाम पर यह बदलाव किया गया। मेवात का नाम नूंह कर दिया गया। बेंगलुरु शहर के रेलवे स्टेशन का नाम 19वीं सदी के क्रांतिकारी स्वतंत्रता सेनानी क्रांतिवीर संगोल्ली रायन्ना के नाम पर कर दिया गया। 7 रेस कोर्स के नाम से मशहूर प्रधानमंत्री आवास के नाम को बदलकर लोक कल्याण मार्ग किया गया। वर्ष 2017 में हरियाणा के फतेहाबाद के गांडा गांव का नाम बदलकर अजित नगर रखा गया। ग्रामीणों का कहना था कि इस नाम के कारण युवाओं को शर्मिंदगी होती है। ओडिशा के वीइलर टापू मिसाइल परीक्षण का केंद्र रहा है। इस टापू का नाम मिसाइल मैन की स्मृति में एपीजे अब्दुल कलाम टापू कर दिया गया। गुजरात के कांडला पोर्ट का नाम बदलकर जनसंघ के सह–संस्थापक के नाम पर दीन दयाल पोर्ट किया गया। राजस्थान के चोर बसई के नाम में से चोर और बिहार के नचनिया जगह का नाम बदलकर काशीपुर रखा गया।

इसी तरह से जुलाई 2018 में मुंबई के जिस एलिफिंस्टन रोड का नाम ब्रिटिश गवर्नर के नाम पर था, उसे बदलकर प्रभादेवी किया गया। राजस्थान के बाड़मेर के मियों का बाड़ा का नाम बदलकर महेश नगर किया गया। ग्रामीणों का कहना था कि मुस्लिम नाम होने के कारण उन्हें अपने बच्चों के विवाह के लिए प्रस्ताव नहीं मिलते क्योंकि लोग इसे मुस्लिमों का गांव समझ लेते हैं। अगस्त 2018 में मुगलसराय रेलवे स्टेशन का नाम बदलकर पंडित दीनदयाल उपाध्याय किया गया। 1860 में इस स्टेशन की स्थापना हुई थी और यह देश के व्यस्ततम स्टेशनों में से एक है। इलाहाबाद का नाम बदलकर प्रयागराज कर दिया गया।

वास्तविकता तो यह है कि जीवन में संस्कृति एवं राष्ट्रीय प्रतीकों का बहुत महत्व है। लेकिन मानसिक गुलामी और स्वार्थपूर्ण राजनीति के चलते कुछ राजनैतिक दल इसका विरोध करते हैं। तुष्टीकरण की राजनीति के चलते वे नामों के बदलाव का विरोध करते रहे हैं। वे विदेशी मीडिया के माध्यम से सरकार के इस तरह के कार्यों के खिलाफ एक एजेंडा चलाते रहे हैं। लेकिन यह सर्वविदित है कि किसी सशक्त राष्ट्र के निर्माण में जहां आर्थिक, सामाजिक और राजनैतिक ढांचे का मजबूत होना आवश्यक है, वहीं राष्ट्र का स्वावलंबी और आत्मनिर्भर होना भी आवश्यक है और ऐसा तभी संभव है जब राष्ट्रीय गौरव और उसके प्रतीकों को बिना किसी झिझक के स्थापित करेंगे। राष्ट्रीय गौरव की स्थापना के लिए न केवल सरकार को बल्कि देश के आम नागरिक को भी सक्रिय पहल करनी चाहिए।

(लेखक आईएमएस, गाजियाबाद में पत्रकारिता एवं जनसंचार संकाय के चेयरपर्सन हैं)

ISSN No. 2581-3528

पदचिन्ह जिनका पता बताते हैं

नरेन्द्र भदौरिया

उनका कोई पता नहीं था। उनके पद चिन्ह ही उनका पता बताते थे। उनके पास कोई पद नहीं था। पर प्रभाव डालने की अनोखी प्रतिभा थी। ऊँचे आदर्श थे। दुर्गम राहों पर बड़ी सहजता से चलते रहे। कठिन दिनों को अपने साहस से जीते रहे। पीड़ा होती तो भी मुस्कान का लेप स्वयं लगा लेते।

उनका नाम बस नाम भर का नाम नहीं था। उनके गाँव निहस्था को अब तक उनके नाम पर गर्व है। नाम था राज किशोर सिंह। हर कोई उनको रज्जा बाबू कहते थे। छोटी सी काया से बड़ी सी आभा छिटकती रहती थी। किसी निर्बल को देखते तो ठहर जाते। पूछे बिना आगे न बढ़ते। निर्धनों से उन्हें बहुत नेह था। दुखिया को देखते तो मुट्ठी में जो आता भर कर दे देते। किसी के प्रति कभी द्वेष की बात नहीं करते। ईर्ष्या के थपेड़े उनके साधारण से जीवन को एक झोंका देकर लौट जाते। स्वयं आदर्शों के उपदेश किसी को नहीं देते। पुरानी पड़ चुकी साइकिल जहाँ तहाँ खड़ी मिल जाती थी। वहीं किसी से बातें करते रज्जा बाबू दिख जाते। बात–बात पर अड़ते नहीं थे। पर जब पाँव टिका देते तो बड़े–बड़े हट जाते थे।

उनकी आँखों में मलिनता कभी पड़ाव नहीं डाल पाती। मुस्कान ऐसी कि हर किसी को अपनी ओर खींच लेती। शुद्ध बोलते पर किसी को खरोंचते नहीं थे। अपनी कहने की बारी आती तो तनिक सा बोलकर चल देते। उनकी बातों को समझना नहीं गुनना पड़ता था। सादगी का अर्थ उनके तईं निर्धनता नहीं था। यह बात उनको देखकर समझी जा सकती थी। स्वयं के जीवन पर उतना ही व्यय करते जिसकी नितान्त आवश्यकता होती। यह बात कहकर नहीं जीकर दिखाते रहे। गाँव में पैतृक भूमि – घर सब था। बड़े कोठी जैसे घर की ऊँची चौपाल थी। घर के बाहर बड़ा सा प्रवेश द्वार उन्नत खड़ा था। पहुँचते ही लगता किसी बड़े भूस्वामी की चौखट पर आ गये। आँगन तक जाने पर तीन ओर टटिया दिख जातीं। ये टटिया न होतीं तो गायें घर के भीतर तक डेरा जमा लेतीं।

घर के सेहन में कोई खूँटा नहीं था। बैलों की जोड़ी भी नहीं थी। पर चरही थी। नित्य मुँह अंधेरे लम्बी चरही में चारा सान कर डाल देते। गायें बछड़े किसके थे, पता नहीं। अधिकतर डाँगर ढोर होते। इनकी चरही में चारा खाकर चल देते। जिसका कोई नहीं, उन्हीं के तो थे रज्जा बाबू। तीन बेटे तीन बेटियों की अम्मा तो सन्तुष्टि की मूर्ति थीं।

रज्जा बाबू की लालगंज (रायबरेली) में नगर की मुख्य सड़क पर किताबों की दुकान थी। रज्जा बाबू साँझ ढलते गाँव चले जाते। तीन बजे उठकर तैयार होते। तभी उनकी अर्धांगिनी दलिया–चना या कोई अन्य स्वल्पाहार बना

देतीं। सूर्योदय की रश्मियां उनका स्वागत लालगंज में करतीं। जहाँ वह अपना प्रिय व्यवसाय समाचार पत्र बिक्रेता का जीवन भर करते रहे। उनकी साइकिल पर पत्र पत्रिकाएं टंगी रहतीं। दिन में कुछ घण्टे ही पुस्तकों की दुकान पर बैठते। अन्यथा साइकिल पर किधर गये कोई बता नहीं पाता। उनकी दुकान दिन भर खुली रहती। भले वह वहाँ हों या न हों।

लालगंज उन दिनों बैसवारा इण्टर और डिग्री कॉलेज के कारण सुदूर अंचलों के बच्चों का प्रिय शैक्षिक केन्द्र था। अच्छे अनुशासन में गुणवत्ता युक्त शिक्षा के लिए अभिभावक अपने बच्चों को इस उप नगर में ले आते। रज्जा बाबू ऐसे बहुत से बच्चों के स्थानीय अभिभावक थे। बैसवारा इण्टर कालेज में प्रवेश बहुत सहज नहीं होता था। पर रज्जा बाबू जिस बच्चे को आशीष दे देते उसे प्रवेश तो मिल ही जाता था। इन बच्चों की सारी दुविधाओं का हल रज्जा बाबू होते थे।

उनकी दुकान पर पहली बार मुझे मेरा सहपाठी सुधांशु लेकर पहुँचा तो रज्जा बाबू वहाँ नहीं थे। मेरे पास तीन पाठ्य पुस्तकें नहीं थीं। जे एन त्रिवेदी रसायन विज्ञान पढ़ाते थे। पुस्तक नहीं होने पर ऐसा घूरा कि मुझे रोना आ गया। पढ़ाते समय भी वह बहुत धीरे बोलते थे। उनकी भृकुटी का अनुशासन बड़ा कठोर था। हाथ तो उठाते ही नहीं थे कि किसी को चपत लगायें।

मेरा साथी नवीन कहता था कि जे एन सर और भौतिकी वाले एल के पाण्डे की कक्षा में पढ़ने का अर्थ है विषय को ठीक प्रकार से पढ़कर आना। बस्ता भर कर पुस्तकें लाने का हठ नहीं करते थे। घर से तैयार होकर नहीं आये तो पकड़े जाओगे। रज्जा बाबू की दुकान पर ऐसे बच्चों की भीड़ लगती जिनके पास मंहगी पाठ्य पुस्तकें क्रय करने के पैसे नहीं होते। दुकान पर रज्जा बाबू नहीं होते तो भी ऐसे बच्चों को वहीं बैठकर तैयारी करने को पुस्तक मिल जाती। नित्य आने वाले बच्चों को खुली छूट रज्जा बाबू ने दे रखी थी। ऐसे बच्चे दुकान के आस पास जहाँ ठौर मिलता बैठकर पढ़ लिया करते। जिनको रज्जा बाबू अच्छी तरह जान लेते उन्हें यदा कदा कोई पुस्तक घर ले जाकर तैयारी करने को स्वयं कह देते। एक दिन वह विद्यालय के कार्यलय

ISSN No. 2581-3528

में बैठे दिखे। मैं निकट गया तो देखा पाँच बच्चों का शुल्क जमा कर रहे हैं। बाद में पता चला कि वह हर वर्ष कई बच्चों की सहायता स्वयं की आय से करते हैं।

रज्जा बाबू तब अमर हो गये जब इन्दिरा गाँधी को अपदस्थ करने वाली वैधानिक लड़ाई में उन्हें साक्षी बनाया गया। उनकी साख नहीं डिगने वाले सिद्ध व्यक्ति की थी। रज्जा बाबू की गवाही प्रमाणिक रही। इसका कारण यह था कि वह किसी दबाव के आगे झुकने को तैयार नहीं हुए। इन्दिरा गांधी सत्ता में रहते हुए सब कुछ अपने नियंत्रण में कर लेना चाहती थीं। उनके लिए कुछ भी कर डालने को उद्यत लोग जाने किसके संकेत पर रज्जा सिंह को क्षति पहुँचे ऐसे काम करने लगे। सड़क पर टक्कर मार कर उनकी साइकिल ही नहीं एक पाँव भी टूट गया। वह चाहते तो इसके लिए हाँक लगाते। पर इत्ता भर कहा कि लड़ाई की दिशा नहीं मुड़ने देनी है। पुलिस को व्यथा तक नहीं बतायी। लोग गुस्साये तो सबको मना कर दिया। लोग टूटते रहे। कुछ साक्षी बदल गये। तो कुछ किनारा कर गये। रज्जा बाबू अचूक और अमोघ सिद्ध हुए। उच्चतम न्यायालय तक उनकी अकाट्य बातों की काट इन्दिरा जी के अधिवक्ताओं को नहीं मिल सकी। अन्ततः इन्दिरा गाँधी के विरुद्ध जो निर्णय आया उसने उनकी कुर्सी उलट दी। रज्जा सिंह ऐसे रहे जो निर्भीक होकर न्यायालय में खड़े रहे। यह बात कहते हुए इन्दिरा गाँधी के विरुद्ध चुनाव और फिर विधिक लड़ाई लड़ने वाले राजनारायण ने बहुत भावुक होकर कही थी। स्वयं राजनारायण ने कहा था कि इन्दिरा गांधी को निर्णायक टक्कर तो रज्जा बाबू ने दी है।

रज्जा बाबू में ऐसी दृढ़ता राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के कारण थी। वह संघ के प्रखर स्वयंसेवक थे। नित्य शाखा पर जाकर संघ की प्रार्थना दोहराते थे। उनके जीवन में संघ का इतना गहरा प्रभाव था कि उनका मन कभी अधीर नहीं होता था। ऐसी नैतिकता कि उनके पग कभी डगमगाये नहीं। उनके जीवन को आदर्श मानने वाले लोग आज भी कहते हैं –रज्जा बाबू जैसा व्यक्ति धरती पर दूसरों के लिए एक वट वृक्ष थे। किसी व्यक्ति को नैतिक मूल्यों के प्रति कितना समर्पित रहना चाहिए यह बात उनकी जीवन यात्रा पर दृष्टिपात करने से स्पष्ट झंकृत होती है ।

(लेखक राष्ट्रवादी विचारक एवं लेखक हैं)

करनी का फल है बॉयकॉट

सभी का मनोरजंन कराने वाला बॉलीवुड आजकल जनता का गुस्सा झेल रहा है। बॉलीवुड की आने वाली फिल्में लगातर असफल साबित हो रही हैं। इसका कारण है सोशल मीडिया पर जनता की नाराजगी द्वारा बॉयकॉट करना। बॉलीवुड सहित देशभर में बॉयकॉट करने का विरोध भी हो रहा है, परन्तु कोई ये जानने की कोशिश नहीं कर रहा कि आखिर क्यों भारतीय सिनेमा को सिर आंखों पर बिठाने वाला समाज विरोध में आ गया है। इसका कारण है, देश के बहुसंख्यक समाज को फिल्मों व अन्य धारावाहिकों में लगातार अपमानित करना। पुराने समय से देखेंगे तो ज्ञात होगा कि हर फिल्म में गलत केवल हिन्दू किरदार को ही दिखाया है। किसी भी फिल्म में कोई बड़ा विलेन कभी मुस्लिम या अन्य धर्म को मानने वाला नही दिखाया। हमेशा निगेटिव किरदार में हिन्दू को ही प्रस्तुत किया गया है। अधिकतर पुरानी फिल्मों में मुस्लिम किरदार को हमेशा पॉजिटिव दिखाया है। क्रांति, शोले, जंजीर, सहित अनगिनत फिल्मों में मुस्लिम किरदार को ही श्रेष्ठ दिखाया गया। जबकि हमेशा से फिल्म निर्माताओं ने हिन्दू जातियों जैसे ठाकुर, बनिया, पंडित आदि को निगेटिव ही दर्शाया है। अभी पीछे आमिर खान की बहुचर्चित फिल्म पीके में तो हद ही कर दी। हिन्दू आराध्य भगवान शिव को जिस तरह टॉयलेट में दर्शाया है बहुत ही घिनोनी हरकत है। पीके फिल्म में ही पाकिस्तानी युवक को सच्चा दिखाया है और हिन्दू सन्यासी को झूठा व फरेबी। कमियां सभी धर्मों में होती है पर बॉलीवुड को केवल सनातन धर्म की ही कमियां उजागर करने में आंनद आता है। भारत व भारतीय संस्कृति पर आघात करने वाले क्रूर मुगल शासक अकबर को जिस प्रकार से दर्शाया है, वो उसकी वास्तविकता के बिल्कुल विपरीत है। जोधा के पिता ने अकबर से हार स्वीकार की जिस कारण अकबर ने जोधा को जबरन पत्नी बनाया परन्तु फिल्म में जोधा अकबर की प्रेम कहानी दर्शा दी। भारत के महानायक महाराणा प्रताप से अकबर का युद्ध हुआ। युद्ध लड़ने वाले दोनों महान कैसे हो सकते हैं। इसके अतिरिक्त एक दो को छोड़कर जितने भी मुस्लिम अभिनेता हैं, वो सभी समय–समय पर भारत को बदनाम करने के लिए आतुर रहते है। आमिर खान, शाहरुख खान, नशीरुद्दीन शाह, जावेद अख्तर सहित बड़े सितारों को भारत में डर लगता है। भारत में रहकर भारत के इतिहास, भारत की संस्कृति से खिलवाड़ करने का ही नतीजा है कि लगातर बड़ी फिल्में असफल साबित हो रही हैं। हाल ही में आयी बड़ी फिल्म ब्रह्मास्त्र के अभिनेता रणवीर कपूर सार्वजनिक रूप से बीफ को पसंद बताकर खाने की बात करते हैं। करण जौहर इस फिल्म की कमाई का कुछ भाग पाकिस्तान में बाढ़ पीड़ितों पर लगाने की बात करते हैं। आखिर समझ क्या रखा है देश को? अजय देवगन की आगामी फिल्म थैंक गॉड में चित्रगुप्त भगवान को अश्लीलता के साथ दर्शाया है, जिस कारण इसका भी बॉयकॉट शुरू हो गया। अगर भारतीय सिनेमा ने अपनी मानसिकता नही बदली तो इसके इससे भी गम्भीर परिणाम भुगतने पड़ सकते हैं। बॉलीवुड को हिन्दू धर्म को लक्षित करके अपमानित करना, मुस्लिम सितारों को धार्मिक कट्टरता को छोड़ना ही होगा तथा अन्य सितारों को भारतीय मान मर्यादा रखनी ही होगी। कभी दाऊद के इशारों पर काम करने वाला बॉलीवुड आज भी उसी विचारधारा के अनुरूप कार्य कर रहा है और उसी का परिणाम है बॉयकॉट।

(ललित शंकर गाजियाबाद)

ISSN No. 2581-3528

रियासतों के एकीकरण में पटेल की भूमिका : एक विश्लेषण

डॉ. प्रदीप कुमार

स्वतंत्र भारत के प्रथम गृह मंत्री सरदार के उपनाम से प्रसिद्ध सरदार वल्लभ भाई पटेल बैरिस्टर और प्रसिद्ध राजनेता थे। भारत के स्वाधीनता संग्राम के दौरान वह भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के नेताओं में से एक थे जो 1947 में भारत की आजादी के बाद पहले 3 वर्ष उपप्रधानमंत्री, गृह मंत्री, सूचना मंत्री और राज्य मंत्री रहे थे। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद करीब 500 से भी अधिक देसी रियासतों का एकीकरण करना सबसे बड़ी समस्या थी। पटेल ने अपनी कुशलता एवं कूटनीति और जरूरत पड़ने पर सैन्य हस्तक्षेप के जरिए उन अधिकांश रियासतों को तिरंगे के तले लाने में सफलता प्राप्त की। इस सब से भी बढ़कर उनकी ख्याति भारत के रजवाड़ों को शांतिपूर्ण तरीके से भारतीय संघ में शामिल करने तथा भारत के राजनैतिक एकीकरण के कारण है। 5 जुलाई 1947 को सरदार पटेल ने रियासतों के प्रति नीति को स्पष्ट करते हुए कहा कि "रियासतों को तीन विषयों सुरक्षा, विदेश तथा संचार व्यवस्था के आधार पर भारतीय संघ में शामिल किया जाएगा'। उन्होंने ने भारतीय संघ में उन रियासतों का विलय किया जो स्वयं में संप्रभुता प्राप्त थी। उनका अलग झंडा और अलग शासक था। उन्होंने आजादी के ठीक पूर्व संक्रमण काल में ही बी पी मेनन के साथ मिलकर कई राज्यों को भारत में मिलाने के लिए कार्य आरंभ कर दिया था। पटेल और मेनन ने देसी राजाओं को बहुत समझाया कि उन्हें स्वायत्तता देना संभव नहीं होगा। इसके परिणाम स्वरूप 3 रियासतें हैदराबाद, कश्मीर और जूनागढ़ को छोड़कर शेष सभी रजवाड़ों ने स्वेच्छा से भारत में विलय का प्रस्ताव स्वीकार कर लिया। 15 अगस्त 1947 तक हैदराबाद, कश्मीर और जूनागढ़ को छोड़कर भारतीय रियासतें भारत संघ में सम्मिलित हो चुकी थी जो भारतीय इतिहास की एक बहुत बड़ी उपलब्धि थी। जूनागढ़ के नवाब के विरुद्ध जब बहुत विरोध हुआ तो वह भागकर पाकिस्तान चला गया और इस प्रकार जूनागढ़ भी भारत में मिला लिया गया। जब हैदराबाद के निजाम ने भारत में विलय का प्रस्ताव अस्वीकार कर दिया तो सरदार पटेल ने वहां सेना भेजकर निजाम का आत्मसमर्पण करा लिया। देसी राज्यों के एकीकरण की समस्या को सरदार पटेल ने बिना खून खराबे के बड़ी बुद्धिमत्तापूर्ण और प्रशासनिक सूझबूझ से रियासतों के एकीकरण की चुनौती का समाधान निकाल लिया। यहां तक कि राजकोट, जूनागढ़, बहालपुर, बड़ौदा, कश्मीर, हैदराबाद को भारतीय महासंघ में सम्मिलित कराने में सरदार पटेल को कई पेचिदगियों का सामना भी करना पड़ा।

रियासतें (प्रिंसली स्टेट) ब्रिटिश भारत में स्वायत्त राज्य थी। इन्हें रियासतें, रजवाड़े या व्यापक अर्थ में देसी रियासत कहते थे। स्वतंत्रता से पूर्व इनकी संख्या 565 थी, जिनके अंतर्गत लगभग 40 प्रतिशत भूमि एवं 28 प्रतिशत जनसंख्या निवास करती थी। यद्यपि रियासतों की संख्या को लेकर अभी तक कोई एक राय नहीं बन पाई है और इनकी संख्या क्रमशः 548, 549, 550, 551, 552, 553, 554, 555, 556, 560, 561, 562, 563, 564, 565, 556, 568 और 584 देखने को मिलती है। बटलर कमेटी (1929) के अनुसार इनकी संख्या 562 थी। स्वतंत्र भारत की सरकार ने देसी रियासतों पर जो स्वतंत्र पत्र निकाला उसमें इनकी संख्या 584 है। ये ब्रिटिश साम्राज्य के द्वारा सीधे शासित नहीं थी, बल्कि भारतीय शासकों द्वारा शासित थे। परंतु व्यावहारिक तौर पर देखा जाए तो इन पर परोक्ष रूप से ब्रिटिश शासन का ही नियंत्रण रहता था। ये रियासतें राष्ट्रवादी प्रवृतियों एवं अन्य उपनिवेशी शक्तियों के उदय को नियंत्रित करने में ब्रिटिश सरकार के लिए एक सहायक की भूमिका के रूप में थी। स्वतंत्रता के समय ये 3 तरह के क्षेत्रों में विभाजित थी। एक– ब्रिटिश भारत के क्षेत्र जो लंदन के इंडिया ऑफिस तथा भारत के गवर्नर जनरल के सीधे नियंत्रण में थे। दूसरा– 'देसी राज्य' (प्रिंसली स्टेट्स) जिन पर भारतीय राजाओं का शासन था। तीसरा– फ्रांस और पुर्तगाल के औपनिवेशिक क्षेत्र, जिसमें चंद्र नगर, पांडिचेरी, गोवा आदि शामिल थे। भारतीय स्वतंत्रता अधिनियम 1947 ने रियासतों को यह विकल्प दिया था कि वह भारत या पाकिस्तान अधिराज्य (डोमिनियन) में शामिल हो सकती थी या एक स्वतंत्र संप्रभु राज्य के रूप में स्वयं को स्थापित कर सकती थी। अन्तिम वायसराय लार्ड माउंटबेटन ने जो प्रस्ताव भारत की आजादी को लेकर जवाहरलाल नेहरू के सामने रखा था उसमें भी यह प्रावधान था कि भारत के 565 रजवाड़े भारत या पाकिस्तान में से किसी एक में विलय को चुनेंगे और वह चाहें तो दोनों के साथ न जाकर अपने को स्वतंत्र भी रख सकेंगे। परिणामस्वरूप कुछ रियासतों ने भारत में शामिल होने का निर्णय किया, तो कुछ ने स्वतंत्र रहने का, वहीं कुछ रियासतें पाकिस्तान का हिस्सा बनना चाहती थी। इन 565 रजवाड़ों जिनमें से अधिकांश प्रिंसली स्टेट ब्रिटिश भारतीय साम्राज्य का हिस्सा थे में से अनेक भारत में एक–एक करके विलय पत्र पर हस्ताक्षर करते गए या दूसरे शब्दों में कहें की सरदार वल्लभभाई पटेल तथा वी पी मेनन ने अपनी अद्भुत क्षमता एवं कूटनीतिक दक्षता से हस्ताक्षर करवा लिए। बचे रह गए थे –हैदराबाद, जूनागढ़, कश्मीर और भोपाल इनमें से भोपाल का विलय सबसे अंत में हुआ। भारत संघ में शामिल होने वाली अंतिम रियासत भोपाल इसलिए भी थी क्योंकि पटेल और मेनन को पता था कि भोपाल को अंततः मिलना ही होगा उधर जूनागढ़ पाकिस्तान में मिलने की घोषणा कर चुका था तो कश्मीर ने स्वतंत्र बने रहने की घोषणा कर दी। इन सभी क्षेत्रों को राजनीतिक रूप से एकीकृत करना एवं देसी रियासतों की समस्या का स्थाई हल निकालना उस समय देश के महानायकों के समक्ष एक महत्वपूर्ण एवं गंभीर चुनौती थी।

इस गम्भीर और महत्वपूर्ण राजनीतिक एकीकरण की जिम्मेदारी को सरदार बल्लभ भाई पटेल एवं वी पी मेनन को सौंपा गया। पटेल यह अच्छी तरह से समझते थे कि राजाओं के बीच राष्ट्रवाद का बोध न होने पर अराजकता की स्थिति उत्पन्न हो सकती है इसीलिए उन्होंने राष्ट्रीय भाव से राजाओं को भारत में शामिल करने का हर संभव प्रयास किया। उन्होंने प्रिवी पर्स (एक भुगतान जो शाही परिवारों को भारत के साथ विलय पर हस्ताक्षर करने पर दिया जाता था) की अवधारणा को भी पुर्नस्थापित किया। कुछ

ISSN No. 2581-3528

रियासतें निजी हित को देखते हुए पाकिस्तान का हिस्सा बनना चाहती थी।

पटेल की अद्भुत क्षमता एवं दक्षता, कूटनीति दूरदर्शिता तथा आत्मीय शैली ने छः सप्ताह के अन्दर 565 में से 561 रियासतों को विलय के लिए तैयार कर लिया। इस अतुलनीय क्षमता एवं राष्ट्र की अखंडता के लिए किये गये उनके कार्यों के बल पर उन्हें इतिहास के सुनहरे पृष्ठों में लौह पुरुष के नाम से अंकित किया गया।

देसी राज्यों के विलीनीकरण के कारण उनकी तुलना जमर्नी के बिस्मार्क से की जाती है बल्कि उनका यह कार्य बिस्मार्क से भी बड़ा था क्योंकि बिस्मार्क ने जर्मनी में 20–25 राज्यों का एकीकरण किया था जबकि सरदार पटेल ने भारत में 565 देसी रियासतों का विलीनीकरण करके अखण्ड भारत का निर्माण करके पूरे विश्व में एक मिसाल कायम की जिसका उदाहरण दुनिया में अन्य कहीं नहीं मिलता है।

त्रावणकोर उन प्रथम रियासतों में से एक था जिसने भारत के साथ विलय पत्र पर हस्ताक्षर करने से इनकार कर दिया था एवं कांग्रेस के राष्ट्रीय नेतृत्व पर प्रश्न चिन्ह लगाया था । लेकिन केरल समाजवादी पार्टी के सदस्य द्वारा उनकी हत्या के असफल प्रयास के बाद सीपी अय्यर ने भारत के साथ जाने का फैसला किया और 30 जुलाई 1947 को त्रावणकोर भारत में शामिल हो गया।

जोधपुर एक राजपूत रियासत थी और जहां का राजा हिंदू था और अधिकांश जनसंख्या हिंदू थी असाधारण रूप से पाकिस्तान की ओर झुकाव रखता था। सरदार पटेल के समझाने पर 11 अगस्त 1947 को महाराजा हनवंत सिंह ने विलय पत्र पर हस्ताक्षर किए इस प्रकार जोधपुर रियासत का भारतीय राज्य में एकीकरण हो गया।

जूनागढ़ गुजरात के दक्षिण पश्चिम में स्थित एक रियासत जो 15 अगस्त 1947 तक भारत में शामिल नहीं हुई थी कि अधिकांश जनसंख्या हिंदू एवं राजा मुस्लिम था। 15 सितंबर 1947 को नवाब मोहम्मद महावत खान ने पाकिस्तान में शामिल होने का फैसला किया और तर्क दिया कि जूनागढ़ समुद्र द्वारा पाकिस्तान से जुड़ा है।

7 नवंबर 1947 को जूनागढ़ की अदालत ने भारत सरकार को राज्य का प्रशासन अपने हाथ में लेने के लिए आमंत्रित किया। जूनागढ़ के दीवान सर शाहनवाज भुट्टो सुप्रसिद्ध (जुल्फिकार अली भुट्टो के पिता) ने हस्तक्षेप के लिए भारत सरकार को आमंत्रित करने का निर्णय लिया। फरवरी 1948 को जनमत संग्रह कराया गया जो लगभग सर्वसम्मति से भारत के विलय के पक्ष में गया और इस प्रकार जूनागढ़ रियासत का भी भारत में विलय हो गया।

हैदराबाद उस समय सभी रियासतों में सबसे बड़ी एवं समृद्धशाली रियासत थी पटेल को इस बात का अंदाजा था कि हैदराबाद पूरी तरह से पाकिस्तान के कहने में था यहां तक कि पाकिस्तान पुर्तगाल के साथ हैदराबाद का समझौता कराने की फिराक में था। हैदराबाद के पास अब दो ही विकल्प बचे थे भारत या पाकिस्तान में शामिल होना। ज्यादातर हिंदू आबादी वाले राज्य के मुसलमान शासक और आखिरी निजाम उस्मान अली खान ने आजाद रहने का फैसला किया और अपने साधारण

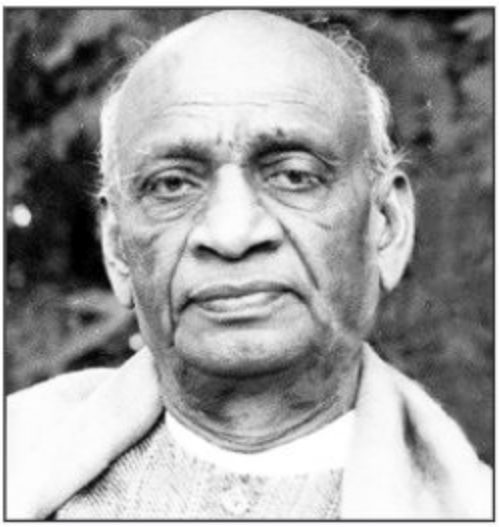

सेना के बल पर राज करने का फैसला किया। निजाम ने ज्यादातर मुस्लिम सैनिकों वाली रजाकारों की सेना बनाई। भारत सरकार उत्सुकता से हैदराबाद की तरफ देख रही थी और सोच रही थी कि हैदराबाद के निजाम खुद भारत संघ में सम्मिलित हो जाएंगे लेकिन ऐसा नहीं हुआ। सरदार पटेल ने हैदराबाद को जबरदस्ती विलय का फैसला किया अंततः हैदराबाद के निजाम को भारत में विलय पत्र पर हस्ताक्षर करने पड़े।

भोपाल जहां नवाब हमीदुल्लाह खान रियासत के नवाब थे जो भोपाल, सीहोर और रायसेन तक फैली हुई थी। मार्च 1948 में नवाब हमीदुल्लाह ने भोपाल के स्वतंत्र रहने की घोषणा की। इन सबके बीच बी पी मेनन एक बार फिर से भोपाल आए और नवाब को स्पष्ट शब्दों में कहा कि भोपाल स्वतंत्र नहीं रह सकता 30 अप्रैल 1949 को नवाब ने विलयीकरण के पत्र पर हस्ताक्षर कर दिए। सरदार पटेल ने नवाब को लिखे पत्र में कहा मेरे लिए बड़ी निराशाजनक और दुख की बात यह थी कि आप के अविवादित हुनर तथा क्षमताओं को अपने देश के उपयोग में उस समय नहीं आने दिया जब देश को उसकी जरूरत थी। अंततः 1 जून 1949 को भोपाल रियासत भारत का हिस्सा बन गई।

कश्मीर रियासत जहाँ की बहसंख्यक जनसंख्या मुस्लिम थी, जबकि राजा हिंदू था। राजा हरि सिंह ने पाकिस्तान या भारत में शामिल होने के लिये विलय पत्र पर कोई निर्णय न लेते हुए 'मौन स्थिति' बनाए रखी। इसी दौरान पाकिस्तानी सैनिकों एवं हथियारों से लैस आदिवासियों ने कश्मीर में घुसपैठ कर हमला कर दिया। महाराजा ने भारत सरकार से मदद की अपील की। 26 अक्टूबर, 1947 को राजा हरि सिंह ने 'विलय पत्र' पर हस्ताक्षर कर दिये।

लक्ष्यदीप समूह को भारत के साथ मिलाने में भी पटेल की महत्वपूर्ण भूमिका थी। इस क्षेत्र के लोग देश की मुख्यधारा से कटे हुए थे और उन्हें भारत की आजादी की जानकारी 15 अगस्त 1947 के कई दिनों बाद मिली।

भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन को वैचारिक एवं क्रियात्मक रूप से एक नई दिशा देने के कारण सरदार पटेल ने राजनीतिक इतिहास में एक गौरवपूर्ण स्थान प्राप्त किया। वास्तव में वे आधुनिक भारत के शिल्पी थे। उनके कठोर व्यक्तित्व में बिस्मार्क जैसी संगठन कुशलता, कौटिल्य जैसी राजनीति तथा राष्ट्रीय एकता के प्रति अब्राहम लिंकन जैसी अटूट निष्ठा साफ झलकती थी। जिस अदम्य उत्साह, असीम शक्ति से उन्होंने नवजात गणराज्यों की प्रारंभिक कठिनाइयों का समाधान किया उसके कारण विश्व के राजनीतिक मानचित्र में उनका अमिट स्थान बना। भारत के राजनीतिक इतिहास में सरदार पटेल के योगदान को कभी भुलाया नहीं जा सकता। उनके द्वारा किए गए ऐतिहासिक कार्यों को देश सदैव स्मरण रखेगा।

वह लौह पुरुष थे। युग पुरुष पटेल को भारत का बिस्मार्क की उपाधि से सम्मानित किया गया एवं मरणोपरांत वर्ष 1991 में भारत का सर्वोच्च नागरिक सम्मान 'भारत रत्न' दिया गया।

(लेखक सत्यवती कालेज (सांध्य), दिल्ली विश्वविद्यालय में असिस्टेंट प्रोफेसर (इतिहास विभाग) हैं)

ISSN No. 2581-3528

श्री कृष्ण जन्मभूमि कटरा केशव देव मंदिर मथुरा

प्रो. (डॉ.) हरेन्द्र सिंह

भारतवर्ष के सांस्कृतिक और आध्यात्मिक गौरव की आधारशिलाऐं इसकी सप्त महापुरियां हैं। 'गरुडपुराण' में इनके नाम जिस क्रम से दिए गये हैं – उनमें मथुरा का स्थान अयोध्या के पश्चात अन्य पुरियों के पहले रखा गया है। 'पदम पुराण' में मथुरा का महत्व सर्वोपरि मानते हुए कहा गया है कि यद्यपि काशी आदि सभी पुरियाँ मोक्ष दायिनी है तथापि मथुरापुरी धन्य है। यह पुरी देवताओं के लिये भी दुर्लभ है। इसी का समर्थन 'गर्गसंहिता' में करते हुए बताया गया है कि पुरियों की रानी कृष्णापुरी मथुरा बृजेश्वरी है, तीर्थेश्वरी है, यज्ञ तपोनिधियों की ईश्वरी है यह मोक्ष प्रदायिनी धर्मपुरी मथुरा नमस्कार योग्य है। उत्तर प्रदेश के मथुरा जिले में स्थित मथुरा ऐतिहासिक रूप से कुषाण राजवंश द्वारा राजधानी के रूप में विकसित नगर है। भगवान श्री कृष्ण के काल से भी पूर्व अर्थात् लगभग 7500 वर्ष से यह नगर स्थित है। भगवान श्री कृष्ण का जन्म मथुरा में हुआ था अतः इसे श्री कृष्ण जन्मभूमि के नामों से भी जाना जाता है। पौराणिक साहित्य में मथुरा को अनेक नामों से संबोधित किया गया है जैसे– शूरसेन नगरी, मधुपुरी, मधुनगरी, मधुरा आदि। वाल्मीकि रामायण में मथुरा को घने जंगलों के कारण मधुपुर, मधुवन या मधुदानव का नगर कहा गया है तथा यहाँ लवणासुर की राजधानी बताई गई है। इस नगरी को मधुदैत्य द्वारा भी बसाई बताया जाता है। लवणासुर, जिसको शत्रुघ्न ने युद्ध में हराकर मारा था इसी मधुदैत्य का पुत्र था, इस कारण से मधुपुरी या मथुरा का रामायण–काल में बसाया जाना परिलक्षित होता है। रामायण में इस नगरी की समृद्धि का वर्णन है। इस नगरी को लवणासुर ने भी सजाया संवारा था। प्राचीनकाल से अब तक इस नगर का अस्तित्व अखण्डित रूप से चला आ रहा है।

भारतीय धर्म, दर्शन कला एवं साहित्य के निर्माण तथा विकास में मथुरा का महत्त्वपूर्ण योगदान सदा से रहा है। यह भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता का केंद्र है। आज भी महाकवि सूरदास, संगीत के आचार्य स्वामी हरिदास, स्वामी दयानंद के गुरु स्वामी विरजानंद, चौतन्य महाप्रभु आदि से इस नगरी का नाम जुड़ा हुआ है। मथुरा श्रीकृष्ण जन्म भूमि तो निर्विवाद रूप से है ही। पौराणिक कथा के अनुसार द्वापर युग में श्री कृष्ण के मामा चंद्रवंशी यादव कंस मथुरा के राजा थे जिनकी राजधानी मथुरा थी। मथुरा में कंस के अधिक अत्याचारों के कारण ही भगवान श्री कृष्ण ने मथुरा में जन्म लिया। कंस को आकाशवाणी में भविष्यवाणी हुई थी कि वासुदेव और देवकी की आठवी संतान कंस का वध करेगी जिसके कारण अपनी बहन देवकी और बहनोई वासुदेव को कंस ने जेल में बन्द कर दिया था। इसी आकाशवाणी की परिणिति में भगवान श्री कृष्ण ने मथुरा में जन्म लेकर कंस को मारकर अपने माता पिता को बंधीगृह से मुक्त कराया था। मथुरा नगरी में श्रीकृष्ण ने दंतवक्र को भी मारा था।

मथुरा का केशवदेव मंदिर अति प्राचीन मंदिर है, जो कि लगभग साढ़े पाँच हजार वर्ष से भी अधिक पुराना है। कहा जाता है कि जिस जगह पर कंस के कारागार में देवकी के गर्भ से भगवान विष्णु के परमावतार श्री कृष्ण का जन्म हुआ था, कालांतर में वहीं केशवदेव मंदिर का निर्माण हुआ था। औरंगजेब ने मथुरा पर हमला किया और 1670 में उस केशवदेव मंदिर को नष्ट कर दिया तथा उसके स्थान पर शाही ईदगाह का निर्माण किया। यह मंदिर सन् 1017–18 में महमूद गजनवी के कोप का भी भाजन बना। संस्कृत के एक शिलालेख से ज्ञात होता है कि महाराजा विजयपाल देव जब मथुरा के शासक थे तब सन् 1150 ई. में जज्ज नामक किसी व्यक्ति ने श्रीकृष्ण जन्मस्थान पर एक नया मंदिर बनवाया था। हालाँकि, आज इस स्थान पर शाही ईदगाह मस्जिद स्थित है, जो केशवदेव मंदिर को तोड़कर बनाया गया है। मुगल आक्रांता औरंगजेब के विध्वंस के बाद मंदिर के गर्भगृह पर बने इस मस्जिद को लेकर न्यायालय में वाद चल रहे हैं।

कुछ इतिहासकार कहते हैं कि इस मंदिर का सर्वप्रथम निर्माण भगवान कृष्ण के प्रपौत्र व्रजनाभ ने छठी शताब्दी ईसा पूर्व में कराया था। वज्रनाम के पिता का नाम अनिरुद्ध था। अनिरुद्ध भगवान श्रीकृष्ण के पुत्र प्रद्युम्न के बेटे थे। कालांतर में इस मंदिर का जीर्णोद्धार विभिन्न राजाओं द्वारा किया जाता रहा। इतिहासकारों के अनुसार, ईसा पूर्व 85–57 में श्रीकृष्ण मंदिर का पुनर्निर्माण कराया गया था। महाक्षत्रप सौदास के काल में ब्राह्मी लिपि में लिखे शिलालेखों से पता चलता है कि वसु नामक व्यक्ति ने इस मंदिर का पुनर्निर्माण कराया था। कहा जाता है कि समय बीतने के साथ ही मंदिर पुराना पड़ने लगा और इसकी हालत जर्जर हो गई। उसके बाद 5वीं शताब्दी में इस मंदिर का दूसरी बार जीर्णोद्धार हुआ। गुप्त वंश के सम्राट चंद्रगुप्त विक्रमादित्य ने इसका जीर्णोद्धार कराया था। इसका वर्णन चीनी यात्री फाह्यान ने किया है। फाह्यान 399 ईस्वी से 414 ईस्वी तक भारत भ्रमण पर था।

श्री कृष्ण जन्मभूमि कटरा केशव देव मंदिर के बारे में कहा जाता है कि भगवान श्रीकृष्ण के महाप्रयाण के पश्चात् युधिष्ठिर महाराज ने परीक्षित को हस्तिनापुर का राज्य सौंपकर श्रीकृष्ण के प्रपौत्र वज्रनाभ को मथुरा मंडल के राज्य सिंहासन पर प्रतिष्ठित किया। महाराज वज्रनाभ ने महाराज परीक्षित और महर्षि शांडिल्य के सहयोग से मथुरा मंडल की पुनः स्थापना करके उसकी सांस्कृतिक छवि का पुनरूद्धार किया। वज्रनाभ द्वारा ही योगेश्वर श्री कृष्ण की जन्मस्थली का भी महत्त्व स्थापित किया गया। जहाँ कंस का कारागार था, जहां वासुदेव पुत्र श्री कृष्ण ने भाद्रपद कृष्ण अष्टमी की आधी रात को अवतार ग्रहण किया था, आज यह स्थान कटरा केशवदेव नाम से प्रसिद्व है। यह कारागार केशवदेव के मन्दिर के रूप में परिणत हुआ। इसी के आसपास मथुरा पुरी सुशोभित हुई।

ई. पूर्व 80 से ई. पूर्व 57 के महाक्षत्रप सौदास अथवा शोडाष जिन्होंने मथुरा पर लम्बे समय तक शासन किया, के समय के एक ब्राह्मी लिपि के शिला लेख से ज्ञात होता है कि किसी वसु नामक व्यक्ति ने श्रीकृष्ण जन्मस्थान पर एक मंदिर तोरण द्वार और वेदिका का निर्माण कराया था। शोडाष के समय का लेख जो सिरदल पर लिखा गया है मथुरा छावनी पर कुए पर मिली थी, जो प्रारंभ में केशव देव कटरा मंदिर पर खुदा हुआ था इसके शुरू की पांच पंक्तियाँ नष्ट हो चुकी है शेष लेख इस प्रकार है – **वसुना कौन्तेय भगवतो वासुदेवस्य महास्थाने चतुः शालं तोरण वेदिका प्रतिष्ठापिता प्रीतो भवतु वासु देव : स्वमित्य महाक्षत्रपस्यशोदसस्य सम्वते यातं।** अर्थात् दृमहाक्षत्रप शोडाष के शासनकाल में वसु कौन्तेय ने भगवान् वासुदेव कृष्ण के जन्म स्थान पर एक चतु शाला मंदिर के तोरण से सुसज्जित द्वार तथा वेदिका की स्थापना की।

इसके पश्चात् दूसरा मन्दिर विक्रमादित्य के काल में सन् 800 ई० के लगभग बनवाया

ISSN No. 2581-3528

गया था। यह मन्दिर सन् 1017–18 ई० में महमूद गजनवी के कोप का भाजन भगवान केशवदेव का मन्दिर उसके द्वारा तोड़ डाला गया। एक अन्य संस्कृत के शिला लेख से ज्ञात होता है कि महाराजा विजयपाल देव जब मथुरा के शासक थे, तब सन् 1150 ई० में जज्ज नामक किसी व्यक्ति ने श्रीकृष्ण जन्मस्थान पर एक नया मन्दिर बनवाया था। यह विशाल एवं भव्य बताया जाता हैं। इसे भी 16 वीं शताब्दी के आरम्भ में सिकन्दर लोदी के शासन काल में नष्ट कर डाला गया था। इसके पश्चात् जहाँगीर के शासन काल में श्रीकृष्ण जन्मस्थान पर पुनः एक नया विशाल मन्दिर ओरछा के शासक राजा वीरसिंह जूदेव बुन्देला द्वारा निर्मित कराया गया था जिसकी ऊँचाई 250 फीट रखी गई थी। यह आगरा से दिखाई देता था। उस समय इस निर्माण की लागत 33 लाख रुपये आई थी। इस मन्दिर के चारों ओर एक ऊँची दीवार का परकोटा बनवाया गया था, जिसके अवशेष अब तक विद्यमान हैं। दक्षिण पश्चिम के एक कोने में कुआ भी बनवाया गया था, इस का पानी 60 फीट ऊँचा उठाकर मन्दिर के प्रागण में फव्वारे चलाने के काम आता था। यह कुआँ और उसका बुर्ज आज तक विद्यमान है। सन् 1669 ई० में पुनः यह मन्दिर औरंगजेब द्वारा नष्ट कर दिया गया और इसकी भवन सामग्री से ईदगाह बनवा दी गई जो आज विद्यमान है।

श्री कृष्ण जन्मभूमि कटरा केशव देव मंदिर पर मुस्लिम आक्रान्ताओं ने अनेकों बार हमले करके इसे नष्ट करने का प्रयास किया पहला हमला अफगानिस्तान का शासक महमूद गजनवी ने सन् 1017–1018 में किया था। महमूद गजनवी के दरबारी इतिहासकार अल उत्बी ने अपनी पुस्तक 'तारीख–ए–यामिनी' में लिखा है, "हैरान महमूद ने मंदिर की भव्यता देखकर कहा कि अगर कोई इसकी जैसी इमारत बनाना चाहे तो उसे 100 करोड़ दीनार खर्च करने पड़ेंगे। माहिर कारीगरों को भी इसे बनाने में कम–से–कम 200 साल लगेंगे।" मंदिर की भव्यता देख चिढ़े महमूद ने केशवदेव मंदिर को तुड़वा दिया। अल उत्बी ने लिखा है कि केशवदेव मंदिर में सोने की पाँच मूर्तियाँ थीं। इन मूर्तियों की आँखों में माणिक्य जड़े थे। मंदिर में इतना सोना मिला था कि उसे ले जाना संभव नहीं था। इसलिए उसने काफी सोना गला दिया था। कहा जाता है कि सोने को ले जाने के लिए महमूद गजनवी ने कई ऊँटों का इस्तेमाल किया था। सन् 1860–90 तक मथुरा के अंग्रेज कलेक्टर रहे एफ.एस. ग्रौसे ने 'मथुरा–वृंदावनः द मिस्टिकल लैंड ऑफ लॉर्ड कृष्णा' नामक पुस्तक में लिखा है कि महमूद गजनवी ने श्रीकृष्ण मंदिर के साथ–साथ शहर के सैकड़ों मंदिरों को तुड़वा दिया था। मंदिरों को लूटने के साथ ही उसने शहर में भी जमकर उत्पात मचाया था।

महमूद गजनवी के आक्रमण के बाद वर्ष सन् 1150 में जज्ज नाम के एक जागीरदार ने यहाँ एक भव्य विष्णु मंदिर बनवाया था। माना जाता है कि जज्ज कन्नौज के गढ़वाल राजवंश के अधीन एक जागीरदार थे। वहीं, कुछ इतिहासकारों का मानना है कि वे मथुरा के राजा विजयपाल देव से संबंधित हैं। समय के साथ–साथ जब दिल्ली पर मुस्लिमों के गुलाम वंश, खिलजी वंश, तुगलक वंश और सैय्यद वंश का शासन हुआ तो कट्टर सोच के शासक सिकंदर लोदी को मथुरा के केशवदेव मंदिर की प्रसिद्धि का पता चलने पर उसने मंदिर पर हमला कर इसे नष्ट कर दिया। समय के साथ–साथ जब दिल्ली से लोदी वंश का अंत हो गया और दिल्ली पर मुगल वंश के शासक अकबर का शासनकाल आया तो उसने भी मथुरा के केशवदेव मंदिर के चबूतरे तोड़ने का प्रयास किया था। सिकंदर लोदी के विध्वंस के बाद मथुरा मंदिर विहीन हो गया था और मुस्लिम शासन–काल में कोई मंदिर निर्माण का साहस नहीं कर पा रहा था। जिस जगह मंदिर का गर्भगृह था, उसके समीप में ही चौबे नाम के एक व्यक्ति ने चबूतरा बनवा दिया था। बीतते समय के साथ हिंदू उस चबूतरे को पूजने लगे और उसकी परिक्रमा करने लगे। यह बात शहर के काजी (इस्लामी धर्मगुरु और जज) शेख अब्दुल नबी को नागवार गुजरी। उसने हिंदुओं को ऐसा करने से रोका, लेकिन हिंदू नहीं माने। उस समय मथुरा राजा मानसिंह की जागीर थी। अकबर के काजी शेख अब्दुल नबी अपने साथ दो हजार मुगल सैनिक, जिनमें सारे मुस्लिम थे, लेकर मथुरा गया और चबूतरे को तोड़ने का आदेश दिया था जिसे राजा मानसिंह के हस्तक्षेप से बचा लिया गया था। आगे चलकर चौबे ने उस चबूतरे पर भगवान का विग्रह रखकर प्राण–प्रतिष्ठा करा दिए और विधिवत पूजा होने लगी। मथुरा के इस श्रीकृष्ण जन्मभूमि मंदिर के विभिन्न अध्ययनों और साक्ष्यों के आधार पर मथुरा के राजनीतिक संग्रहालय के श्री कृष्णदत्त वाजपेयी ने भी स्वीकारा है कि कटरा केशवदेव ही श्री कृष्ण की असली जन्मभूमि है। कटरा केशवदेव–स्थित श्रीकृष्ण–चबूतरा ही भगवान श्रीकृष्ण की दिव्य प्राक्टय–स्थली कहा जाता है। मथुरा–म्यूजियम के क्यूरेटर डा. वासुदेवशरण जी अग्रवाल ने अपने लेख में ऐतिहासिक तथ्य देकर इस अभिमत को सिद्ध किया है। इससे सिद्ध होता है कि मथुरा के राजा कंस के जिस कारागार में वसुदेव–देवकीनन्दन श्रीकृष्ण ने जन्म–ग्रहण किया था, वह कारागार आज कटरा केशवदेव के नाम से ही विख्यात है और 'इस कटरा केशवदेव के मध्य में स्थित चबूतरे के स्थान पर ही कंस का वह बन्दीगृह था, जहाँ उसने अपनी बहन देवकी और अपने बहनोई वसुदेव को कंस ने कैद कर रखा था।'

अंग्रेज कलेक्टर एफ.एस. ग्रौसे ने अपनी पुस्तक में लिखा है कि सन 1590 ईस्वी में राजा मानसिंह ने मथुरा में भगवान श्रीकृष्ण के मूल स्थान पर भव्य मंदिर बनवा दिया था। 1618 ईस्वी में ओरछा के राजा वीर सिंह देव बुंदेला ने इस मंदिर को और भव्य बनवाया। राजा वीर सिंह ने उस दौरान मंदिर पर 33 लाख रुपए खर्च किए। कहा जाता है कि यह मंदिर इतना ऊँचा था कि उसकी रोशनी दिल्ली और आगरा से दिखाई देती थी। इस मंदिर के शीर्ष पर सोने की छतरी लगी थी। सन 1650 में मथुरा आने वाले फ्रांसीसी यात्री टैवर्नियर और मुगल दरबार में आए इटली के यात्री निकोलाओ मानुची ने इस मंदिर का जिक्र अपने–अपने संस्मरणों में किया है। टैवर्नियर ने लिखा है कि बनारस के बाद भारत का सबसे प्रसिद्ध मंदिर मथुरा में है। वहीं, मानुची ने लिखा कि मंदिर के शीर्ष पर लगी सोने की छतरी को आगरा से भी देखा जा सकता था।

प्राचीन केशव–मन्दिर के स्थान को 'केशव कटरा' कहते हैं। ईदगाह के तीन ओर की विशाल दीवारें ध्वस्त मन्दिर के पाषाण–खण्डों से बनी हुई हैं, जो ध्वंस किये गये प्राचीन मन्दिर की विशालता का मूक संदेश दे रही हैं। उपेक्षित रहने के कारण तीन शताब्दियों से भी अधिक समय तक यह स्थान मिट्टी–मलवे के टीलों में दब गया है। उत्खनन के दौरान उसी मलवे के नीचे से, जहाँ भगवान का अर्चा–विग्रह विराजमान किया जाता था, वह गर्भ–गृह प्राप्त हुआ और उत्तरोत्तर श्रीकृष्ण–चबूतरे का विकास होता चला आ रहा है।

भारतीय स्थापत्य कला और इतिहास में रुचि रखने वाले स्कॉटिश इतिहासकार जेम्स फर्गुसन ने अपनी पुस्तक 'हिस्ट्री ऑफ इंडियन एंड ईस्टर्न आर्किटेक्टर' में लिखा है कि मंदिर की चार मंजिला इमारत की ऊपरी दो मंजिलों को काटकर गिरा दिया गया था। इस पर औरंगजेब ने मेहराब बनवाया था, ताकि मथुरा की यात्रा के दौरान वहाँ नमाज पढ़ सके। सन् 1670 में औरंगजेब मथुरा गया और मंदिर के खंडहर पर बने ईदगाह मस्जिद में नमाज भी पढ़ी। वर्तमान में शाही ईदगाह मस्जिद श्रीकृष्ण जन्मभूमि के गर्भगृह पर स्थित है।

(लेखक सरकार द्वारा 'शिक्षकश्री' विभूषित ख्याति प्राप्त शिक्षाविद, शैक्षिक प्रशासक, प्रोफ़ेसर एवं राष्ट्रवादी चिन्तक हैं)

ISSN No. 2581-3528

महान सनातन भारतीय संस्कृति ही इस देश का मूल आधार है

प्रहलाद सबनानी

किसी भी राष्ट्र के मूल में कुछ तत्व निहित होते हैं, जिनके बल पर वह देश आगे बढ़ता है और समाज के विभिन्न वर्गों को एकता के सूत्र में पिरोए रखता है। भारत के एक राष्ट्र के रूप में, इसके मूल में, सनातन हिंदू संस्कृति का आधार है जो हजारों वर्षों से भारत को आज भी भारत के मूल रूप में ही जीवित रखे हुए है। अन्यथा, पिछले लगभग 1000 वर्षों में भारत को तोड़ने के लिए अरब के आक्रांताओं और अंग्रेजों के द्वारा अनेकानेक प्रयास किए गए हैं। अरब के आक्रांताओं एवं अंग्रेजों ने बहुत अधिक प्रयास किए कि किसी तरह भारतीय मूल संस्कृति को तहस नहस किया जाए, शिक्षा पद्धति को ध्वस्त किया जाए, बलात हिंदुओं का धर्म परिवर्तन किया जाए, आदि आदि। इन प्रयासों में उन्हें कुछ सफलता तो अवश्य मिली परंतु पूर्ण रूप से भारतीय संस्कृति को समाप्त नहीं कर पाए। जबकि कई अन्य देशों (ईरान, लेबनान, इंडोनेशिया, मिस्त्र, ग्रीक आदि) में इनके यही प्रयास पूर्ण रूप से सफल रहे एवं वहां के लगभग सम्पूर्ण नागरिकों को इस्लाम में परिवर्तित करने में वे सफल रहे। भारत में चूंकि सनातन हिंदू धर्म का बोलबाला है अतः यहां इन तत्वों को आज तक सफलता नहीं मिली है हालांकि इनके प्रयास अभी भी जारी हैं।

अंग्रेजों ने जब भारत पर शासन करना प्रारम्भ किया तो उनकी अज्ञानतावश यह सोच थी कि यहां के नागरिक कुछ जानते ही नहीं हैं और इनकी विज्ञान के प्रति कोई समझ ही नहीं है। उनकी यह भी सोच थी कि हिन्दुस्तान कई राज्यों का एक समूह है और यह एक राष्ट्र नहीं है। भारत कभी एक राष्ट्र नहीं रहा है, ना ही अभी यह एक राष्ट्र है और न ही कभी भविष्य में यह एक राष्ट्र रह पाएगा। क्योंकि यहां तो विभिन्न राजा राज्य करते हैं और उनके राज्यों की अलग अलग भौगोलिक सीमाएं हैं इसलिए भारत का एक राष्ट्र के रूप में कभी अस्तित्व ही नहीं रहा है। अंग्रेज यह भी मानते थे कि पूरे भारत के लोग एक हो जाएंगे यह कभी सम्भव ही नहीं है।

अंग्रेज अहंकारवश भारतीयों को अनपढ़, असभ्य एवं रूढ़िवादी तक कहते थे। उनकी नजरों में भारतीयों की कोई ऐतिहासिक उपलब्धि नहीं है एवं भारत के बर्बर, जंगली लोगों को सभ्यता सिखाने का दायित्व हमारा (अंग्रेजों का) है। भारत के लोग प्रशासन करने के अयोग्य हैं किसी कारण से यदि भारत को स्वतंत्र राष्ट्र का दर्जा दे दिया तो इस देश की बर्बादी सुनिश्चित है और फिर इसकी जवाबदारी हमारी (अंग्रेजों की) होगी। उनको विशेष रूप से हिंदुओं से बहुत डर लगता था और वे हिंदुओं से सावधान रहने की आवश्यकता पर बल दिया करते थे। उनकी सोच थी कि स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत बहुत जल्दी बर्बाद हो जाएगा। भारत में

ISSN No. 2581-3528

लोकतंत्र जीवित नहीं रह सकता, यह बहुत ही अस्वाभाविक राज्य है। भारत आजाद होते ही कई टुकड़ों में बिखर जाएगा क्योंकि यहां 52 करोड़ लोग हैं एवं इनकी अलग अलग भाषाएं हैं, ये आपस में लड़ते रहते हैं और कभी भी एक नहीं रह पाएंगे। भारत आजादी के बाद पूरी दुनिया के लिए एक भार बन जाएगा एवं यहां के नागरिक भूख से ही मर जाएंगे। उक्त सोच ब्रिटेन, अमेरिका, लगभग समस्त यूरोपीय देशों सहित कई देशों की भी थी।

आज भी आतंकवादी संगठन एवं विदेशी ताकतें जो भारत को अस्थिर करना चाहते हैं वे इसी परिकल्पना पर अपना कार्य प्रारम्भ करते हैं एवं समाज के विभिन्न वर्गों को आपस में लड़ाने का प्रयास करते नजर आते हैं।

उक्त वर्णित देशों की यह सोच इसलिए थी क्योंकि उनके पास हिंदू सनातन संस्कृति का कोई ज्ञान नहीं था बल्कि उनकी अपनी पश्चिमी रंग में रची बसी सोच थी जो केवल "मैं" में विश्वास करती थी उनके लिए देश मतलब केवल भौगोलिक सीमाओं वाला जमीन का टुकड़ा और उस जमीन के टुकड़े पर रहने वाले लोग ही विशेष हैं। उनकी सोच में अहम का भाव कूट कूट कर भरा है। केवल मैं ही श्रेष्ठ हूं। इस दुनिया में रहने वाले बाकी सभी लोग हमसे हीन हैं। जर्मन लोगों ने अपना एक विशेष दर्शन शास्त्र दुनिया के सामने रखा जिसमें उन्होंने किसी और दर्शन को स्वीकार न करते हुए केवल अपने दर्शन को ही श्रेयस्कर माना एवं अहंकार का भाव जाहिर किया। जर्मन, फ्रेंच से भिन्न हैं। यूरोप में प्रत्येक देश ने अपने आप को दूसरे देश से बिल्कुल अलग रखा हुआ है। पश्चिम का राष्ट्रवाद एकांतिक है इसमें समावेशिता का नितांत अभाव है। इसीलिए आज रूस, यूक्रेन के साथ लड़ रहा है तो जर्मनी की फ्रान्स के साथ नहीं बनती है। इसी प्रकार यूरोप के लगभग सभी देशों के आपसी विचारों में किसी न किसी प्रकार की भिन्नता दृष्टिगोचर होती रहती है। जबकि यह लगभग सभी देश ईसाई धर्म को मानने वाले देश हैं।

आज कई इस्लामी देश भी पश्चिमी सोच की राह पर चलते हुए दिखाई दे रहे हैं कि केवल हमारा धर्म ही श्रेष्ठ है। इस धरा पर जो भी इस्लाम को नहीं मानता हैं वह काफिर है और उसे जीने का हक नहीं हैं। काफिर या तो इस्लाम को कबूल करे अन्यथा वह मार दिया जाएगा। और तो और इस्लामी देशों में भी अलग– अलग किस्म के कई फिर्के आपस में ही लड़ते झगड़ते रहते हैं एवं एक दूसरे को अपने से श्रेष्ठ सिद्ध करने की कोशिश में लगे रहते हैं।

जबकि भारतीय विचारधारा इसके ठीक विपरीत आचरण करना सिखाती है विशेष रूप से सनातन हिंदू संस्कृति में जो व्यक्ति जितना विशेष होगा वह उतना ही विनयपूर्ण होगा और इस नाते भारतीय सनातन हिंदू संस्कृति अविभाजनकारी दर्शन पर चलकर सर्वसमावेशी है। इसमें ईश्वरीय भाव जाहिर होता है। जो मेरे अंदर है वही आपके अंदर भी है अर्थात् मुझमें भी ईश्वर है और आपमें भी ईश्वर का वास है। इस प्रकार प्रत्येक भारतीय, चाहे वह किसी भी जाति का हो, किसी भी मत, पंथ को मानने वाला हो, अपने आप को भारत माता का सपूत कहने में गर्व का अनुभव करता है और इसलिए भारतीय सनातन हिंदू संस्कृति अन्य संस्कृतियों को भी अपने आप में आत्मसात करने की क्षमता रखती है। इतिहास में इस प्रकार के कई उदाहरण दिखाई देते हैं। जैसे पारसी आज अपने मूल देश में नहीं बच पाए हैं लेकिन भारत में वे रच बस गए हैं। इसी प्रकार इस्लाम धर्म को मानने वाले लगभग सभी फिर्के भारत में निवास करते हैं जबकि विश्व के कई इस्लामी देशों में केवल एक विशेष प्रकार के फिर्के पाए जाते हैं।

पिछले लगभग 1000 वर्षों में भारत को तोड़ने के लिए अरब के आक्रांताओं और अंग्रेजों के द्वारा अनेकानेक प्रयास किए गए हैं। अरब के आक्रांताओं एवं अंग्रेजों ने बहुत अधिक प्रयास किए कि किसी तरह भारतीय मूल संस्कृति को तहस नहस किया जाए, शिक्षा पद्धति को ध्वस्त किया जाए, बलात हिंदुओं का धर्म परिवर्तन किया जाए, आदि। इन प्रयासों में उन्हें कुछ सफलता तो अवश्य मिली परंतु पूर्ण रूप से भारतीय संस्कृति को समाप्त नहीं कर पाए।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद, अंग्रेजों एवं अन्य कई देशों की सोच के ठीक विपरीत, विभिन्न मत, पंथों को मानने वाले भारतीय 26 विभिन्न राष्ट्रीय भाषाओं के साथ न केवल सफलतापूर्वक एक दूसरे के साथ तालमेल बिठाकर आनंद में रह रहे हैं बल्कि आज भारतीय लोकतंत्र पूरे विश्व में सबसे बड़े मजबूत लोकतंत्र के रूप में अपना स्थान बना चुका है। यह केवल सनातन हिंदू संस्कृति के कारण ही सम्भव हो सका है। सनातन हिंदू संस्कृति में एकात्मता का भाव मुख्य रूप से झलकता है। अतः वर्तमान में आतंकवादियों एवं अन्य कई देशों द्वारा भारत में अस्थिरता फैलाने के जो प्रयास किए जा रहे हैं उन्हें भारतीय सनातन हिंदू संस्कृति के दर्शन को अपनाकर ही पूर्णतः दबाया जा सकता है एवं इसलिए आज सामाजिक समरसता की देश में सबसे अधिक महती आवश्यकता है। इसके भी आगे जाकर आज भारतीय मुस्लिमों के लिए पूरे विश्व के सामने भारतीयता की पहचान कराने का समय आ गया है एवं भारतीय संस्कृति में रचे बसे इस्लाम के चेहरे को पूरे विश्व के सामने लाना चाहिए ताकि पूरे विश्व से आतंकवाद का सफाया किया जा सके। वैसे हाल ही के समय में कई देशों यथा, जापान, रूस, अमेरिका, ऑस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड, इंडोनेशिया आदि में भारतीय संस्कृति के प्रति रूझान बढ़ता जा रहा है।

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के परमपूज्य सर संघचालक श्री मोहन भागवत जी भी कहते हैं कि "हमारे यहां (भारत में) सब बातों में अपनापन देखने की प्रवृत्ति है। अपनापन देखने की प्रवृत्ति से दुनिया का भला होता है। अलगाव देखने की प्रवृत्ति से दुनिया में कलह होती है, शोषण होता है, अन्याय होता है, युद्ध होते हैं, पर्यावरण की हानि होती है। इसलिए सनातन धर्म सबको अपना मानने की प्रवृत्ति का धर्म है, और उसकी रक्षा के लिए भारत का निर्माण हुआ है।"

अब तो विश्व के कई विकसित देशों को भी यह आभास होने लगा है कि भारतीय सनातन हिंदू संस्कृति इस धरा पर सबसे पुरानी संस्कृतियों में एक है और भारतीय वेदों, पुराणों एवं पुरातन ग्रंथों में लिखी गई बातें कई मायनों में सही पाई जा रही हैं। इन पर विश्व के कई बड़े–बड़े विश्वविद्यालयों में शोध किए जाने के बाद ही यह तथ्य सामने आ रहे है।

(लेखक भारतीय स्टेट बैंक के उप महाप्रबंधक पद से सेवा निवृत्त हैं)

ISSN No. 2581-3528

पुस्तक समीक्षा

राष्ट्र की अवधारणा
(पंडित दीनदयाल उपाध्याय विचार-दर्शन)

डॉ. मनमोहन सिंह शिशौदिया

पंडित दीनदयाल उपाध्याय को दुनिया एक राजनैतिक दल के नेता के रूप में ज्यादा जानती है। राजनैतिक दल का नेता होने के बाबजूद उन्होंने न केवल देश के सम्मुख उपस्थित दैनिक समस्याओं, चुनावों, आंदोलनों, विपदाओं, तथा दल प्रचार पर ध्यान दिया, अपितु सदेव राष्ट्र-निर्माण को अपने राष्ट्र चिंतन के केंद्र में रखा। यह चिंतन न केवल वृहद है अपितु मूलगामी भी। उनके चिंतन के मूल में जो खास प्रश्न रहे वो हैं– हमारी मातृभूमि का विभाजन क्यूँ हुआ? स्वाधीनता संग्राम के दिग्गजों के हाथों में सरकार की बागडोर आने के बाद भी राष्ट्र सुदृढ़ और एकात्म क्यूँ नहीं हो पा रहा? नए सत्ताधीशों में अपने त्याग का मूल्य वसूलने की इतनी जल्दी क्यूँ दिख रही है? क्यूँ राष्ट्रीय कलह बढ़ती जा रही है? जनता में राष्ट्र को समर्थ एवं श्रेष्ठ बनाने का उत्साह और स्फूर्ति क्यूँ नहीं पाई जाती? लोकतंत्र की व्यवस्थाएं उतरोत्तर भ्रष्ट क्यूँ होती जा रही हैं? विदेशी हस्तक्षेप और परावलंबन क्यूँ बढ़ता जा रहा है?

पंडित जी सभी समस्याओं के मूल में गए और उन्होंने कहा, केवल भूमि और उस भूमि पर चलने वाले लोग ही राष्ट्र हैं यह अवधारणा गलत है। उनका मानना था कि विदेशी सत्ता का केवल विरोध करना ही देशभक्ति नहीं होती। देशभक्ति एक प्रबल भावात्मक प्रेरणा होती है। देश की हर समस्या और लोगों के दुख के लिए केवल विदेशी शासन को ही जिम्मेदार ठहराया जाता रहा। परंतु अन्य भावनात्मक पक्षों की घोर उपेक्षा होती रही। जैसे किसका राष्ट्र? स्वतंत्रता किसलिए? किस जीवन मूल्य व्यवस्था को हम स्वीकारने वाले हैं? ऐसे प्रश्नों पर गंभीरता से विचार नहीं हुआ। अतः समाज जीवन में अनेकों विकृतियाँ पैदा हो गईं। सेवा का स्थान अधिकार ने ले लिया, जीवनमूल्यों का ह्रास होने लगा, चरित्र, योग्यता एवं गुणों के स्थान पर पैसा ही व्यक्ति की प्रतिष्ठा का आधार बन गया। जबकि होना यह चाहिए था कि अर्थ हमारी भौतिक आवश्यकताओं को पूरा करने का साधन मात्र है, साध्य कदापि नहीं। अतः पंडित जी इस

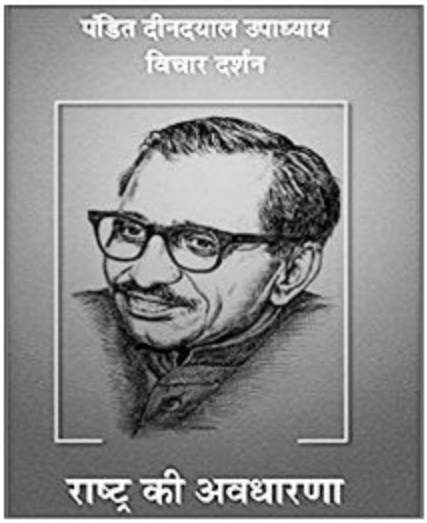

निष्कर्ष पर पहुंचे कि इस जीवन दृष्टिकोण को बदलना होगा। यह परिवर्तन भारतीय संस्कृति के आदर्शों के आधार पर ही किया जा सकता है। इस गौरवमयी संस्कृति की पुनः प्रतिष्ठा करने से ही राष्ट्रजीवन में सर्वत्र व्याप्त विकृतियों का शमन एवं निराकरण हो सकेगा।

पंडित जी कहते थे कि अब चुनावों को केवल सत्ता प्राप्ति का साधन माना जाने लगा है। आदर्श विहीनता जीवन के सभी अँगोपांगों में व्याप्ति होती जा रही है और राष्ट्रीय सद्गुणों से राष्ट्र अधिकाधिक वंचित होता जा रहा है। परावलंबन और परानुकरण उतरोत्तर बढ़ते जा रहे हैं। हिन्दू समाज को लगा उदासीनता का रोग तो अभी नष्ट नहीं हुआ है। पंडित जी जैसे लोगों के विचार या जीवन में कोई अंतर नहीं होता। उन्होंने भारत की भूमि पर हजारों वर्ष तक पल्लवित-पुष्पित होते रहे जो आदर्श तथा विचार, सातत्य के साथ सब प्रकार की परिस्थितियों में टिके रहे, उन्हीं की अभिव्यक्ति नए संदर्भ में पंडित जी जैसे लोगों ने की है। उनके द्वारा निरूपित तत्व नया नहीं होता, उन्हें तो समाज को हुई स्वत्व की विस्मृति दूर कर उसकी चेतना को जाग्रत करने की लग्न लगी होती है, अतः उनके विवेचन को केवल नया संदर्भ प्राप्त होता है। वे आरएसएस के संपर्क में वर्ष 1937 में आए और 1949 तक संघ कार्य में ही पूर्णतः तल्लीन रहे। इस अवधि में उनके चिंतन, विचार, एवं जीवन व्यवहार को सुदृढ़ आधार प्राप्त हुआ। वे गुरुजी के निकट संपर्क में आए और संघ के राष्ट्र चिंतन के साथ एकरूप हो गए। दीनदायल जी के राष्ट्रचिंतन का आधारभूत विचार हिन्दू राष्ट्र विचार ही है। हिन्दू राष्ट्र शब्द न तो संघ का और न ही पंडित जी की ही कोई नयी खोज है। यह वही विचार है जो विवेकनाद, अरविन्दो, तिलक, सावरकर आदि समाज के नेताओं ने सांस्कृतिक राष्ट्रवाद के विचार के नाते सहज प्रकट किया था। इस भूमि पर रहने वाले सभी लोगों का यह राष्ट्र है, यह प्रादेशिक राष्ट्रवाद का विचार है। यहाँ पाश्चात्य लोगों द्वारा उच्चारण की सुविधा के लिए प्रचलित इंडियन शब्द ने संभ्रम उत्पन्न किया। हिन्दू और हिंदुस्तान का ऐतिहसिक एवं प्राकृतिक विचार कबाड़ खाने में डाल दिया गया और इंडियन शब्द का अनुवाद हिन्दी में किया जाने लगा। हिन्दू मुसलमान ईसाई आदि सभी को यहाँ के राष्ट्रीय (नेशनल्स) मानते हुए ब्रिटिश शासन के विरोध में इन सबकी राष्ट्रीय एकता स्थापित करने का प्रयास लगातार होता रहा। इस सबके बाद भी 1920 तक जबकि गांधी जी के

ISSN No. 2581-3528

नेत्रत्व में काँग्रेस द्वारा खिलाफत आंदोलन को गोद लिया गया, राष्ट्रीयता की अवधारणा के बारे में उतना भ्रम जनमानस में नहीं होता था। हेडगेवार ने इसे हिन्दू राष्ट्र घोषित किया। यह संकट उन्हें बहुत पहले दिखाई दे रहा था। पंडित जी ने इस विचार को न केवल स्वीकार किया अपितु उसे उन्होंने अपने चिंतन, अध्ययन एवं प्रगाढ़ श्रद्धा का विषय बना लिया। उन पर इसका इतना प्रभाव पड़ा कि जब उन्हें गुरुजी की इच्छानुसार एक राजनैतिक दल का कार्य करने का दायित्व दिया गया तो वे प्रादेशिक राष्ट्रवाद की धारा में बह नहीं गए, प्रत्युत हिन्दू जीवन धारा की राष्ट्रीय जीवन धारा के साथ अभिन्नता का ह्रदय से सहज प्रतिपादन करते गए। अपने विचारों की सत्यता में उनकी पूरी आस्था थी।

पंडित दीनदयाल उपाध्याय के राष्ट्र चिंतन का आधार था मातृभूमि, लोगों के मन में मातृभूमि के प्रति भक्तिभावना और एकता प्रदान करने वाली संस्कृति। उनके अनुसार अलगाववाद जैसी समस्याओं का हल है राष्ट्रीय एकात्मता की भावना को सूदृढ़ करना और अलगाववादी राजनैतिक आकांक्षाओं को कदापि प्रश्रय न देना। सत्ताधारी दलों एवं समाचार पत्रों द्वारा हिन्दू और सिख, हिन्दू और हरिजन, हिन्दू और नवबोद्ध आदि शब्द प्रयोग किए जाते हैं जोकि अकारण ही द्वैत भावना का पोषण करते हैं। वर्ष 1931 तक जिन आदिवासियों का समावेश हिंदुओं में होता था, अंग्रेज सरकार ने उन्हें हिंदुओं से अलग मानने की नीति अपनाई। परंपरा से जो हिन्दू थे, उन्हें भी हिंदुओं से अलग मानने का क्रम चलाया गया। उन्हें धर्मविहीन बताया जाने लगा। इसके कारण उनका धर्म परिवर्तन सरल हो गया। हिन्दू संस्कृति में सबको समा लेने का गुण पहले से ही है अतः सिख, बोद्ध, जैन, हरिजन, वनवासी आदि को हिन्दू समाज से बाहर मानना राष्ट्रीय एकात्मता के सूत्र को दुर्बल बनाकर विघटन को बढ़ावा देना है। ये सभी हिन्दू समाजपुरुष के अवयव हैं। विभिन्न अवयवों के काम अलग–अलग ही क्यू न हों, सब मिलकर शरीर को स्वस्थ बनाते हैं। पण्डितजी यह स्वीकारते थे कि दलित समाजबान्धवों पर सदियों से घोर अन्याय होता रहा है। परंतु इस कथित उच्च वर्ग ने इनके प्रति सामान्य मनुष्यता भी नहीं दिखाई। साथ ही उन्होंने इस पर भी चिंता जताई कि कुछ दलित नेता अपने समाज बान्धवों को ऊपर उठाने के लिए प्रामाणिक सहयोग देने के स्थान पर उनमें विद्वेष एवं अलगाववादी भावन के विषैले बीज बोते हैं और इस प्रवृत्ति को समाप्त करना होगा। राष्ट्रीय विघटन की इस समस्या का निदान पंडित जी के रास्ते से ही संभव है। वह मार्ग है राष्ट्र को केंद्रबिन्दु मानकर व्यक्ति के विकास को पूरा अवसर देते हुए, संघर्ष के बजाय समन्वय के मार्ग का अवलंबन करना। हिन्दू राष्ट्र की व्यापक परिधि में सबको प्रतिष्ठा पूर्वक समा लेना, एकता की भावना सबके अंतःकरण में जगाना, विकृत हो चुकी पुरानी रूढ़ियों को त्यागना और नई व्यवस्था को लाना ही हिन्दू जीवन दृष्टि के साथ सुसंगत होगा। जहां आज संपत्ति और भोग के अवसर पद–प्रतिष्ठा के समानुपाती हैं वहीं पूर्व में ये इनके व्युत्क्रमनुपाती होते थे। हिन्दू संस्कृति में अनेकों ऐसे उदाहरण हैं जिन पर जन्मवश या परिस्थितिवश कोई समाज या राष्ट्र का दायित्व आ पड़ा परंतु उन्होंने वैभव में उलझे बिना आवश्यकता होने पर उसका परित्याग कर दिया। चाणक्य, महात्मा बुद्ध आदि अनेकों ऐसे उदाहरण हैं। महाभारत विजय के उपरांत युधिष्ठिर के राज्य संभालने के बाद जब कुंती ने अपने वानप्रस्थ प्रस्थान के बारे में बताया तो युधिष्ठिर ने कहा कि आपने ही तो हमें युद्ध करने के लिए प्रवृत किया और अब आप स्वयं वन जा रही हैं। इस पर कुंती ने कहा तुम क्षत्रिय हो, तुम्हें स्वधर्म का पालन करने के लिए प्रवृत करना मेरा काम ही था। अधर्म से संघर्ष तो तुम्हें ही करना था, वह तुमने कर लिया। अब मुझे राज–वैभव की कोई आसक्ति नहीं है। अब जेठ–जिठानी के साथ वानप्रस्थ ग्रहण करना ही मेरा धर्म है। जब राजसत्ताओं में निरंकुश बनने कि प्रवृति बढ़ रही है, ऐसे समय सत्ताधारीयों पर अंकुश रखने वाले स्वतंत्र ऋषितंत्र, ऋषिशक्ति की राष्ट्र को नितांत आवश्यकता है। मूल व्यवस्था में श्रमिकों, किसानों, तथा व्यवसाय करने वालों को भौतिक भोगों की छूट अधिक हुआ करती थी। किन्तु उन्हें ऋषियों एवं विरागी सत्ताधीशों जैसी प्रतिष्ठा नहीं प्राप्त होती थी। ज्ञान और चरित्र का प्रवाह शीर्ष नेत्रत्व से नीचे की और रिसता आता था, तो नीचे जनसामान्य के धरातल पर भौतिक सुविधाएं अधिक और ऊपर समाज नेताओं की श्रेणी में उनकी मात्रा कम हुआ करती थी। पंडित जी का यह स्पष्ट मानना था कि हिन्दू शब्द से दृढ़तापूर्वक जुड़े रहे बिना न राष्ट्रीय एकात्मता लायी जा सकेगी और न सुसंगठित समाज का निर्माण ही संभव हो पाएगा। उनका कहना था कि जो नई बातें हमारे लिए कल्याणकारी हो सकती हैं उन्हें हमारे जीवनमूल्यों के साथ सुसंगत अर्थात राष्ट्रानुकूल बनाने के बाद ही स्वीकारना चाहिए। उन्होंने कहा कि देश को राजनैतिक स्वतंत्रता भले ही मिल गई हो, तब भी परानुकरण, आत्मविस्मृति और हीनता की भावना से सच्चे स्वतंत्र जीवन का मार्ग अवरुद्ध हो गया है। जहां भारतीय विचार में सारा जोर समन्वय पर है, संघर्ष पर कदापि नहीं, सहयोग पर है विद्वेष पर नहीं, वहीं पश्चिमी देशों में संघर्ष इनके मूल में रहा है। भावात्मक देशभक्ति का आधार छूटने से नेताओं में चरित्रभ्रष्टता घुस गई और पैठती चली गई। उन्होंने जोर देकर कहा कि हम परावलोकन की बजाय आत्मावलोकन करने वाले बनें। पुस्तक में राष्ट्र कि अवधारणा संबंधी पंडित जी कि सोच को प्रभावी तरीके से प्रस्तुत किया गया है। पुस्तक पाठकों के मन में अवश्य ही राष्ट्र के प्रति भावनात्मक रिश्ते को मजबूत करेगी।

(समीक्षक के निजी विचार)

(समीक्षक गौतमबुद्ध विश्वविद्यालय, ग्रेटर नोएडा में भौतिकी विज्ञान विभाग में शिक्षक हैं)

लेखक एवं पुस्तक परिचय

नागपूर के मूल निवासी श्री चंद्रशेखर परमानन्द भिषीकर तरुण भारत के मुख्य संपादक रहे। उनके दो ग्रंथ केशव: संघ निर्माता एवं श्रीगुरुजी प्रकाशित हुए हैं। साथ ही आपके अनेकों लेख संग्रह एवं पुस्तिकाएँ प्रकाशित हुई हैं। पुस्तक का प्रकाशन सुरुचि प्रकाशन केशव कुंज झंडेवाला, नई-दिल्ली ने किया है। यह पंडित दीनदयाल उपाध्याय विचार दर्शन का खंड -5 है।

ISSN No. 2581-3528

प्राचीन मंदिरों में विज्ञान

प्रमोद भार्गव

भारत ही नहीं वर्तमान दुनिया में केवल पांडुलिपियों और पुस्तकों को ज्ञानार्जन का आधार माना जाता है। इसीलिए भारत में जब आक्रांता आए तो उन्होंने मंदिर और पुस्तकालयों का एक साथ विनाश किया। नालंदा विश्वविद्यालय इसका प्रमुख उदाहरण है। यहां के पुस्तकालय में करीब दो लाख पांडुलिपियां सुरक्षित थीं। इनमें खगोल विज्ञान, गणित, ज्योतिष, वास्तुशास्त्र, आयुर्वेद, युद्धकला, पशु चिकित्सा और धर्म संबंधी पांडुलिपियां थीं, जिनमें ज्ञान का अकूत भंडार था। इसी तरह जो भी भारत के प्राचीन मंदिर हैं, वे खगोल विज्ञान, भौतिकी, प्रकृति और ब्रह्मांड के रहस्यों की खुली किताब को मूर्तियों के माध्यम से प्रदर्शित करते हैं। मूर्ति और स्थापत्य कला के भी ये मंदिर अद्भुत नमूने हैं। भारत ज्ञान के क्षेत्र में अग्रणी न रहने पाए, इसलिए आक्रांता जो भी रहे हों, उन्होंने इन दोनों ही प्राचीन धरोहरों को नष्ट करने का काम निर्ममतापूर्वक किया।

तुर्की शासक बख्तियार खिलजी ने 1199 में इस पुस्तकालय में आग लगाई थी इसमें दो लाख पुस्तकें और पांडुलिपियां करीब तीन माह तक सुलगती रही थीं। आग लगाने के जिस कारण को लेकर खिलजी को भारतीय वैद्याचार्य के प्रति कृतज्ञता जताने की जरूरत थी, उसके बदले में उसने पुस्तकालय को तो अग्नि को होम किया ही, अनेक वैद्यों और हिंदू व बौद्ध धर्म के लोगों की भी हत्या कर दी थी। इसी समय खिलजी ने बौद्धों द्वारा शासित राज्यों को अपने आधिपत्य में ले लिया था। इतिहासकार बताते हैं कि खिलजी एक समय बहुत अधिक बीमार पड़ गया था। उसके साथ आए हकीम उसका उपचार करने में असफल रहे। तब उसने नालंदा विवि के आयुर्वेद विभाग के प्रमुख राहुल श्रीभद्रजी से इलाज कराया। खिलजी ठीक भी हो गया। लेकिन जब उसे यह ज्ञात हुआ कि उपचार की ये पद्धतियां विवि के पुस्तकालय की पांडुलिपियों में सुरक्षित हैं, तब उसने इसे आग के हवाले कर दिया।

कोणार्क का सूर्य मंदिर : इन मुगल शासकों ने कलिंग राज्य को आधिपत्य में लेकर यहां के सूर्यमंदिर को भी नष्ट करने की कोशिश की थी। लेकिन इस कालखंड में यहां गंगवंश के सूर्यवंशी शासक थे। पुरी राज्य की मंदल–पंजी के अनुसार 1278 ईसवीं के ताम्रपत्रों से पता चला कि यहां 1238 से लेकर

1282 तक यही लोग शासक रहे थे। ये शक्तिशाली सम्राट होने के साथ कुशल योद्धा भी थे। भारत में नरसिंह देव के पिता अनंगदेवभीम ऐसे बिरले शासकों में से एक हुए हैं, जिन्होंने तुर्क–अफगानी हमलावरों को कलिंग (प्राचीन ओडीशा) में न केवल घुसने से रोका, बल्कि इस्लामी शासन के विस्तार पर भी अंकुश लगा दिया था। अनंगभीम देव ने तुर्क और अफगानों को कलिंग की धरती से खदेड़ने के लिए वही तरीके अपनाए, जो मुस्लिम हमलावर अपनाते थे। अर्थात् उन्होंने छापामार युद्ध प्रणाली और चालाकी बरतते हुए भी इन आक्रांताओं पर हमले किए। इस परंपरा को नरसिंह देव ने भी अक्षुण बनाए रखा। अनंगभीम देव ने मुस्लिमों को पराजित करने की प्रसन्नता में कोणार्क मंदिर की नींव रखी, जिसे उनके पुत्र नरसिंह देव ने आगे बढ़ाया और फिर अनंगभीम के पोते नरसिंह देव द्वितीय ने इस मंदिर को चुंबकीय तत्व मिश्रित पत्थरों और इस्पात की पटटियों से कुछ इस विलक्षण ढंग से निर्मित कराया कि भगवान सूर्यदेव की प्रतिमा अधर में स्थापित करने में सफलता प्राप्त कर ली थी। यह प्रतिमा भौतिकी के सिद्धांत पर वायु में प्रतिष्ठित की गई थी। इस मंदिर का निर्माण 1250 में शुरू होकर 1262 में समाप्त हुआ।

कोणार्क का संधि–विच्छेद करने पर 'अर्क' का अर्थ 'सूर्य' और 'कोण' के मायने 'कोना' निकलता है। यह मंदिर पुरी के पश्चिमी भाग में चंद्रभागा नदी के तट पर बना है। यह नदी नीले पानी से लबालब रहती है। इस मंदिर की विशेषता मंदिर के गुंबद पर 52 टन का रखा चुंबकीय तत्वों से मिश्रित पत्थर का शिखर था। साथ ही मंदिर की चौड़ी दीवारों में लोहे की ऐसी पट्टिकाएं लगाई गईं थीं, जिनमें प्रभावशाली चुंबक था। इन पट्टियों और शिखर को स्थापित करने में कुछ ऐसी अनूठी तकनीक अपनाई गई थी, जिस कारण भगवान सूर्यदेव की मुख्य प्रतिमा बिना किसी सहारे के हवा में तैरती रहती थी। उस कालखंड में सूर्यमंदिर इसलिए बनाए जाते थे, क्योंकि हिंदू मान्यता के अनुसार सूर्य एकमात्र ऐसे देवता हैं, जो प्रत्यक्ष रूप में आंखों से दिखाई देते हैं। सूर्य की अराधना से श्रृद्धालुओं को साकारात्मक ऊर्जा प्राप्त होती है।

इस मंदिर की कल्पना सूर्यरथ से की गई है। रथ में 12 जोड़े विशाल पहिये लगे हुए हैं, इनमें आठ तीलियां हैं। इस रथ को सात शक्तिशाली घोड़े तीव्र गति से खींच रहे हैं। इस रथ के प्रतीकों को समझने से पता चलता है कि 12 जोड़ी पहिये दिन और रात के 24 घंटे दर्शाते हैं। ये पहिये वर्ष मे 12 माह होने के भी द्योतक हैं। पहियों में लगी आठ तीलियां दिन और रात के आठों प्रहर के प्रतीक हैं। मंदिर में सूर्य भगवान की तीन प्रतिमाएं हैं। उदित सूर्य, यह मूर्ति सूर्य की बाल्यावस्था की प्रतीक है, जिसकी ऊंचाई आठ फीट है। युवावस्था के रूप में मध्यान्ह सूर्य की प्रतिमा है, जिसकी ऊंचाई 9.5 फीट है। तीसरी प्रतिमा प्रौढ़ावस्था यानी अस्त होते सूर्य की है, जिसकी ऊंचाई तीन फीट है। साफ है, यह मंदिर प्रकृति की

ISSN No. 2581-3528

दिनचर्या को मूर्त रूप में अभिव्यक्त करता है।

इस मंदिर की चुंबकीय शक्ति इतनी ताकतवर थी कि जब इस मंदिर के निकट से अंग्रेजों के समुद्री जहाज गुजरते हुए मंदिर के चुंबकीय परिधि में आ जाते थे, तो उनके 'दिशा निरूपण यंत्र' काम करना बंद कर देते थे। परिणामस्वरूप जहाज दिशा बदलकर मंदिर की ओर खिंचे चले आते थे। इस कारण इन सागरपोतों को भारी नुकसान होता था। अतएव अंग्रेज शासकों ने जब इस रहस्य को जान लिया तब उन्होंने मंदिर के शिखर को हटा दिया। चूंकि यह शिखर केंद्रीय चुंबकत्व का केंद्र था, इसलिए इसके हटते ही मंदिर की दीवारों से जो चुबंक–पट्टिकाएं आबद्ध थीं, उनका संतुलन बिगड़ गया और मंदिर के पत्थर खिसकने लगे। गोया, मंदिर का मूलस्वरूप तितर–बितर हो गया।

सूर्यरथ से जुड़ा मिथक : आमतौर से सूर्य को

प्रकाश और गर्मी का अक्षुण स्रोत माना जाता है। परंतु जब सूर्य दक्षिणायन रहते हैं, तब मौसम ठंडा रहता है और जब मकर संक्रांति के दिन से सूर्य उत्तरायण होने लगते हैं, यानी उत्तर की ओर गमन करने लगते हैं, तो ठंड कम होने लगती है और दिन बड़े होने लगते हैं। इस स्थिति के निर्माण का कारक पुराणों में सूर्य के रथ का एक पहिए के होने का मिथक जुड़ा है। सूर्य की गतिशीलता से जुड़ा यह मिथक नितांत सार्थक और निरंतर प्रासंगिक बना रहने वाला है। यदि सूर्य रथ में दो पहिए होते तो उसमें ठहराव आ सकता था। सूर्य की गति में स्थिरता का अर्थ था, सृष्टि का सर्वनाश!

अब वैज्ञानिक भी मान रहे हैं कि यदि सूर्य की गति में ठहराव आ जाए तो पृथ्वी पर विचरण करने वाले सभी जीव–जंतु तीन दिन के भीतर मर जाएंगे। सूर्य के स्थिर होने के साथ ही वायुमंडल में उपलब्ध समूची जलवाष्प ठंडी होकर बर्फ में बदल जाएगी और समूचे ब्रह्मांड में शीतलता छा जाएगी। फलतः कोई भी प्राणी जीवित नहीं रह पाएगा। करीब पचास करोड़ वर्ष पहले अस्तित्व में आए इस प्रकाशित सूर्य की प्राणदायिनी ऊर्जा की रहस्मयी शक्ति को भारतीय ऋषियों ने छह हजार साल पहले ही समझ लिया था। अतएव वे ऋग्वेद में लिख गए थे, 'आप्रा द्यावा पृथिवी अंतरिक्षः सूर्य आत्मा जगतस्थश्च।' अर्थात् विश्व की चर तथा अचर वस्तुओं की आत्मा सूर्य ही है। इसीलिए वैदिक काल के पूर्व से ही सूर्योपासना ज्ञान और प्रकाश को अंतर में एकत्रीकरण के लिए मनुष्य करता आ रहा है। चंद्रमा की चमक भी सूर्य के आलोक में अंतर्निहित है।

एक चक्रीय सूर्य की कल्पना काल (संक्रांति) की गति के रूप में भी की गई है। अतएव सूर्य का महत्व खगोल और ज्योतिष के साथ अध्यात्म में भी है। खगोल विज्ञानियों का मानना है कि उत्तरी व दक्षिणी छोर के अंतिम बिंदु अर्थात् कर्क व मकर रेखा तक सूर्य की रोशनी एकदम सीधी पड़ती है। पृथ्वी के उत्तरी गोलार्द्ध में कर्क रेखा से सूर्य जब दक्षिण की ओर बढ़ता है तो दक्षिणायन और जब मकर रेखा से उत्तर हो जाता है तो उत्तरायण कहलाता है। इन दोनों स्थितियों के निर्माण में छह मास का समय लगता है। महाभारत के योद्धा पितामह भीष्म ने सूर्य के उत्तरायण होने पर ही प्राण छोड़े थे। वैदिक मान्यता है कि देवताओं का निवास उत्तरी ध्रुव और दैत्यों का आवास दक्षिणी ध्रुव है। इसलिए भी उत्तरायण सूर्य को जीव–जगत के लिए शुभ माना जाता है।सूर्य के एक चक्रीय रथ में सात घोड़ों के जुते होने की कल्पना ऋषियों ने की हैं। इन अश्वों को नियंत्रित करने में जो वल्गाएं सौर–रश्मियां परिलक्षित होती हैं, वही सात प्रकार की किरणें हैं। अब विज्ञान ने इन सात किरणों के अस्तित्व को मान लिया है और इनके पृथक–पृथक महत्व को समझने में लगा है। अब तक के शोधों से ज्ञात हुआ है कि सूर्य किरणों के अदृश्य हिस्से में अवरक्त और पराबैंगनी किरणें होती हैं। भूमंडल को गर्म रखने और जैव–रासायनिक क्रियाओं को तेज बनाए रखने का काम अवरक्त किरणें और जीवधारियों के शरीर में रोग प्रतिरोधात्मक क्षमता बढ़ाने का काम पैराबैंगनी किरणें करती हैं। हालांकि इनमें पैराबैंगनी–सी किरणें अत्यंत घातक होती हैं। इस घातक विकिरण से बचने के लिए ही उगते सूर्य की ओर मुख करके तांबे के पात्र में भरे जल से मकर संक्रांति के दिन सूर्य को अर्घ्य देने का विशेष विधान है। ओजोन परत भी इन किरणों को अवरुद्ध करती हैं। सब–कुल मिलाकर सूर्य रथ का एक चक्रीय होना गतिशील बने रहने का द्योतक है। गतिशीलता ही मनुष्य की मूल प्रकृति है। ठहराव का अर्थ जीवन का शुष्क व निष्क्रिय हो जाना है। स्थिरता एक तरह का विकार है, जो जीवन और प्रकृति को जड़ता में बदल सकता है। जड़ता, ऐसी सडांध है, जो मृत्यु का पर्याय बन जाती है। अतएव गतिशीलता जीवन की अनिवार्य चर्या बनी रहनी चाहिए।

सोमनाथ मंदिर का विज्ञान : इसी शैली में

काठियावाड़ गुजरात का सोमनाथ मंदिर था। इस मंदिर में शिवलिंग चुंबकीय प्रभाव से अधर में झूलता रहता था। यह एक आश्चर्य के विषय के साथ वास्तुकला का अद्भुत उदाहरण भी था। हवा में तैरते इस चुंबकीय शिवलिंग और मंदिर में उपलब्ध सोने–चांदी के अकूत भंडार की जानकारी जब महमूद गजनवी को लगी तो वह हतप्रभ रह गया। मंदिर के किवाड़ भी सोने के थे। गजनवी को यह जानकारी अरब यात्री अलबरुनी के यात्रा वृतांत से मिली थी। लुटेरे गजनवी ने सन् 1025 में पांच हजार सशस्त्र सैनिकों के साथ मंदिर को लूटने और तोड़ने की मंशा के साथ सोमनाथ की ओर कूच कर अचानक आक्रमण कर दिया। मंदिर को संकट में देख नगर के हजारों निहत्थे लोग मंदिर की रक्षा के लिए दौड़ पड़े। लेकिन सशस्त्र सैनिकों के हाथ निष्ठुरतापूर्वक मारे गए। मंदिर में पूजा–अर्चना कर रहे 50 हजार श्रद्धालुओं और पुजारियों को भी मार दिया गया। अंततः गजनवी की मंशा पूरी हुई, उसने मंदिर तो तोड़ा ही टनों धन–संपदा भी लूटकर ले गया।

स्वतंत्र भारत में तोड़े गए मंदिर के प्रतीकस्वरूप नया मंदिर सरदार वल्लभभाई पटेल की दृढ़ इच्छाशक्ति के चलते अस्तित्व में लाया गया। इसकी आधारशिला आठ मई 1950 को सौराष्ट्र के पूर्व राजा दिग्विजय सिंह

ISSN No. 2581-3528

ने रखी। 11 मई 1951 को भारत के प्रथम राष्ट्रपति डॉ राजेंद्र प्रसाद ने मंदिर में ज्योतिर्लिंग स्थापित किया। यह मंदिर 1962 में पूर्ण रूप से निर्मित हो गया था। यह मंदिर अरब सागर तट पर स्थित है। 12 ज्योतिर्लिंगों में से इसे पहला ज्योतिर्लिंग माना जाता है। भगवान श्रीकृष्ण ने इसी प्रभाष क्षेत्र में जरा नाम के व्याध के बाण से प्राण त्यागे थे। इस मंदिर में गर्भग्रह, सभामंडप और नृत्यमंडप तीन प्रमुख भाग हैं। मंदिर का 150 फीट ऊंचा शिखर है। शिखर पर 10 टन भार का कलश रखा हुआ है। इसी स्थल पर जो प्राचीन मंदिर था, उस पर एक शिलालेख लगा था, जो संकेत देता था कि यहां से दक्षिणी ध्रुव बिना किसी बाधा के पहुंचा जा सकता है। इसे बाद में समुद्र विज्ञानियों ने सही पाया। इससे पता चलता है कि हमारे प्राचीन ऋषि–मुनियों ने पूरे विश्व का भौगोलिक ज्ञान प्राप्त कर लिया था। ऋग्वेद के अनुसार इस मंदिर का निर्माण चंद्रदेव सोमराज ने किया था। इस मंदिर को मुस्लिम अक्रांताओं ने अनेक बार तोड़ा और हिंदू राजाओं ने हर बार इसका पुर्ननिर्माण कराया।

तैरने वाले पत्थरों से बने रामप्पा मंदिर का विज्ञान : वाल्मीकि रामायण में चित्रित रामसेतु को सभी जानते हैं कि यह तैरने वाले पत्थरों से बना है। ऐसे ही पत्थरों से बना आंध्र–प्रदेश के ग्राम पालमपेट का 'रामप्पा' मंदिर है। इसे काकतिया वंश के महाराजा गणपति देव ने सन् 1213 में बनवाया था। इस मंदिर के शिल्प को देखकर गणपति देव इतने प्रसन्न हुए कि उन्होंने मंदिर का नाम इसके वास्तुशिल्पी रामप्पा के नाम से रख दिया। भारत ही नहीं विश्व में शायद यह इकलौता मंदिर है, जो भगवान के नाम से न होकर शिल्पकार के नाम से है। इस क्षेत्र में भूकंपों से इसके समकालीन अन्य मंदिर और भवन तो जर्जर हो गए, लेकिन यह भूकंप के प्रभाव से अछूता, यथारूप में खड़ा है। इस मंदिर को संयुक्त राष्ट्रसंघ ने 2021 में विश्व–धरोहर की सूची में शामिल किया है।

पुरातत्व विज्ञानियों ने जब इस मंदिर को खंडहरों के बीच सुरक्षित पाया तो इसके निर्माण की विधि जानने की जिज्ञासा हुई। प्रयोग में लाए गए कुछ पत्थरों को निकालकर उनका तकनीकी परीक्षण किया गया। इन पत्थरों का वजन बहुत कम था। अतएव इन्हें जब पानी में डाला गया तो ये डूबने की बजाय तैरते रहे। तब जाकर मंदिर की मजबूती का

रहस्य उजागार हुआ। दरअसल अन्य मंदिर व भवन ठोस व कठोर पत्थरों से बने थे। इसलिए वे सतह पर कंपन होने से टूट गए। लेकिन रामप्पा मंदिर में लगे पत्थरों का भार बहुत कम था, इसलिए भूकंप को चुनौती देते हुए मंदिर खड़ा रहा। हालांकि अब तक वैज्ञानिक इन पत्थरों का यह रहस्य नहीं जान पाए हैं कि ये पत्थर कहां से लाए गए या फिर किस तकनीक से बनाए गए? क्योंकि ये पत्थर दुनिया में प्राकृतिक रूप में कहीं मिलते नहीं हैं। रामसेतु जरूर ऐसे ही पत्थरों से बना है। रामसेतु को नासा ने सबसे प्राचीन मानव निर्मित सरंचना माना है। अब औद्योगिक अनुसंधान परिषद् रामसेतु पर भूगर्भीय हलचल के पड़े असर की जांच कर रही है ?

वैसे इस क्षेत्र में ऐसे छिद्रयुक्त कम दबाव व भार वाले पत्थर भी पाए जाते हैं, जो पानी में नहीं डूबते। इन्हें इसी सेतु का भाग बताकर लोग आजीविका भी चलाते हैं। पुराविदों का मानना है कि ज्वालामुखी फूटने के समय ऐसे पत्थर प्राकृतिक रूप से निर्मित हो जाते हैं, जिनके भीतर हवा भरी रहती है। लेकिन 48 किमी लंबा सेतु इन प्राकृतिक पत्थरों से बनाया गया हो, यह मुश्किल है। रामप्पा मंदिर में जो बलुआ पत्थर जड़े हैं, उन्हें मानव निर्मित माना जा रहा है। इस मंदिर की नींव, आधार और गुंबद ऐसे ही पत्थरों से बनी हैं।

वैज्ञानिकों ने तकनीकी जांच में पाया कि इन पत्थरों को बनाने के लिए एक आयताकार खाई तैयार की गई, जिसमें ग्रेनाइट पत्थर का चूर्ण, गन्ने से निर्मित चीनी (केन शुगर), नदी की रेत और कुछ अन्य यौगिक डालकर एक मिश्रण तैयार किया। इस मिश्रण से नींव भरी गई और विभिन्न आकार के छिद्रयुक्त पत्थर तैयार किए गए। इन पत्थरों को जब आधार और दीवारों पर जोड़ा गया तब इनके बीच में अंतर रखा गया, जैसा कि रेल पटरियों के बीच में रखा जाता है। गोया, 1 अप्रैल 1843 को जब इस क्षेत्र में भूकंप आया तो आस–पास के भवन तो ढह गए, लेकिन मंदिर सुरक्षित रहा। हालांकि मंदिर के आधार के पत्थरों के बीच जो अंतराल रखा गया था, वहां से वे कुछ इंच ऊपर जरूर उठ गए थे। दरअसल निर्माण की इस अनूठी तकनीक की वजह से जो मिश्रण नींव और आयताकार आधार में भरा गया था, वह छिद्रयुक्त कम भार का मिश्रण था। इसलिए उसने भूकंप के कंपन को अवशोषित कर लिया।

लगभग ऐसी ही तकनीक से वर्तमान में बहुमंजिला इमारतें बनाई जा रही हैं। राम मंदिर के आधार में भी ऐसी ही तकनीक इस्तेमाल की जा रही है। इस तकनीक को 'ब्लॉक ऐरिटेड कांकरीट इंजेक्ट टेक्नोलॉजी' कहते हैं। इस विधि से नींव व आधार में गैस भरी जाती है। जिससे भूकंप का असर भवन पर न पड़े। साफ है, हमारे वास्तुशिल्पी भूकंप रोधी तकनीक का प्रयोग जानते थे, इसलिए रामप्पा मंदिर भूकंप से अछूता रहा। भयंकर बाढ़ और भूस्खलन से केदारनाथ मंदिर भी शायद इसीलिए बचा रहा। ओड़ीसा का कोणार्क मंदिर भी इसी तकनीक से निर्मित बताया जाता है। प्राचीन मंदिरों में यह तकनीक प्रयोग करने के अन्य प्रमाण भी मिले हैं।

(लेखक, वरिष्ठ साहित्यकार और पत्रकार हैं)

ISSN No. 2581-3528

ज्योतिष के पितामहः वराहमिहिर

अमित शर्मा

भारतीय ज्योतिष वैदिक परंपरा की देन माना जाता है। मनीषियों ने ज्योतिष शास्त्र को वेदों की आंख माना है। प्राचीन काल में कई ऐसे सिद्धजन हुए जिन्होंने ज्योतिष शास्त्र के क्षेत्र में अनूठा योगदान दिया। भारतीय ज्ञान प्राचीन काल में श्रुति और स्मृति पर आधारित था। यानि सारा ज्ञान एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में सुनकर और स्मृति के आधार पर दिया जाता था। उस दौरान कई बड़े ऋषि–मनीषी हुए जिन्होंने वैदिक ज्योतिष के कई सिद्धांत प्रतिपादित किए। परंतु लिखित रुप में इस ज्ञान की प्राप्ति हमें नहीं हो पाती है। भारतीय ज्ञान परंपरा में लिखित ज्ञान की प्राप्ति हमें बहुत बाद में मिलती है।

ज्योतिष शास्त्र के आरंभिक लिखित कार्यों में सबसे प्रतिष्ठित नाम है वराहमिहिर (वरःमिहिर) का। उन्हें भारतीय ज्योतिष का पितामह कहा जाए तो अतिश्योक्ति नहीं होगी। फलित ज्योतिष में उनका कार्य आज भी ज्योतिषियों का मार्गदर्शन करता है। फलित ज्योतिष ज्योतिषशास्त्र का वह हिस्सा है जिसमें ग्रह–नक्षत्रों की गति और स्थिति के आधार पर भविष्य की घटनाओं की जानकारी लेने का प्रयास किया जाता है। उनकी पुस्तकें बृहत्जातिका, बृहत–संहिता, योगयात्रा और पंचसिद्धांतिका ज्योतिष शास्त्र का अनुपम ज्ञान प्रदान करती हैं। पंचसिद्धांतिका में उन्होंने ही सर्वप्रथम अयनांश का मान 50.32 सेकेंड के बराबर बताया। माना जाता है कि दिल्ली में कुतुब मीनार के निकट स्थित लौह स्तंभ का निर्माण उनकी वैज्ञानिक क्षमता का परिवायक है। सदियों से हवा–पानी सब झेलने के बाद भी लौह स्तंभ में आजतक जंग नहीं लगी है। कई इतिहासकार मानते हैं कि इसका निर्माण गुप्त काल में राजा चंद्रगुप्त विक्रमादित्य द्वितीय ने करवाया था। वराहमिहिर उनके ही दरबार के नवरत्नों में शामिल थे। वराहमिहिर का सबसे बड़ा योगदान ये माना जाएगा कि उन्होंने गणित, खगोल विज्ञान और ज्योतिष जैसे जटिल विषयों को लोगों के हित से जोड़ने का कार्य किया। अपने ज्ञान के अथाह सागर की सरस प्रस्तुति से उन्होंने लोगों में जटिल विषयों को भी लोकप्रिय बना दिया। उनका वेदों का ज्ञान असाधारण था। हमारी वैदिक परंपरा में ज्ञान को जनहित से जोड़ कर ही देखा गया है। वराहमिहिर ने इसी वैदिक परंपरा का पालन किया था।

वराहमिहिर न सिर्फ ज्योतिष शास्त्र के पारंगत थे बल्कि गणितज्ञ और खगोलशास्त्री भी थे। दरअसल प्राचीन काल में ज्योतिष का ज्ञान गणित और खगोल विज्ञान के ज्ञान के बिना अधूरा माना जाता था। एक अच्छा ज्योतिष शास्त्री वहीं हो सकता था जिसे खगोलशास्त्र और गणित का भी संपूर्ण ज्ञान हो। वराहमिहिर को प्रसिद्ध गणितज्ञ और खगोलशास्त्री आर्यभट्ट

का शिष्य माना जाता है। आर्यभट्ट की ही तरह वराहमिहिर ने भी पृथ्वी को गोल माना था। साथ ही उन्होंने गुरूत्वाकर्षण शक्ति के बारे में भी जानकारी देने का प्रयास किया। वराहमिहिर एक असाधारण ज्योतिषी थे। वे अपनी सटीक भविष्यवाणियों के लिए प्रसिद्ध थे।

वराहमिहिर का जन्म 505 ई. में माना जाता है। कुछ ग्रंथों में इनका जन्म 499 ई. में बताया गया है। उनका जन्म उज्जयिनी (उज्जैन) के कापित्थ ग्राम में हुआ था। उन्होंने ज्योतिष का आरंभिक ज्ञान अपने पिता आदित्यदास से पाया था। ऐसा कहा जाता है कि उनके पिता ने सूर्यदेव की कठिन उपासना की थी जिसके बाद उन्हें पुत्र की प्राप्ति हुई थी। इसीलिए उनके पिता ने उनका नाम मिहिर रखा। मिहिर का अर्थ होता है – सूर्य। बाद में वराह उपाधि उन्हें राजा विक्रमादित्य से प्राप्त हुई। इसके बाद उन्हें वराहमिहिर कहा जाने लगा।

उन्होंने लघुजातक, बृहत्जातक, बृहत–संहिता, और पंचसिद्धांतिका जैसे ज्योतिष शास्त्र के प्रसिद्ध ग्रंथों की रचना की। लघुजातक और बृहत्जातक को फलित ज्योतिष का अनुपम ग्रंथ माना जाता है। इसे हमेशा से ज्योतिष शास्त्र के अध्ययन के लिए प्रेरणा स्रोत माना जाता है। गणित ज्योतिष की दृष्टि से पंचसिद्धांतिका का भी बहुत महत्व है। इस ग्रंथ में उन्होंने उस काल तक के सभी सिद्धांतों का समावेश किया है।

वे राजा विक्रमादित्य के नवरत्नों में से एक थे। इतिहास में अकबर के नौ रत्न प्रसिद्ध हैं। बीरबल, तानसेन, अबुल फजल और टोडरमल जैसे अकबर के दरबार की नौ हस्तियों के नाम सबको पता हैं। लेकिन इससे बहुत पहले गुप्त काल में चंद्रगुप्त विक्रमादित्य के नवरत्नों की विशिष्टता भी बढ़–चढ़ कर थी। सम्राट चंद्रगुप्त विक्रमादित्य के नवरत्नों में वराहमिहिर के साथ महाकवि कालीदास, धन्वंतरि, वेताल भट्ट जैसे बड़े–बड़े नाम शामिल थे। कला, संस्कृति, विज्ञान, गणित जैसे सभी क्षेत्रों के सबसे उच्च कोटि के विद्वान सम्राट चंद्रगुप्त विक्रमादित्य द्वितीय के दरबार में विशिष्ट स्थान प्राप्त करते थे। इसी कारण से गुप्त काल को भारत के इतिहास का स्वर्ण काल कहा जाता है।

वराहमिहिर को आर्यभट्ट का शिष्य माना जाता है। आर्यभट्ट भारत के सबसे बड़े गणितज्ञ थे। शून्य की खोज उन्होंने ही की थी। वराहमिहिर ने आर्यभट्ट के कार्य को भी आगे बढ़ाया। उनका गणितीय ज्ञान भी अद्वितीय था।

वराहमिहिर ने अपने समय के प्रचलित सभी महत्वपूर्ण ज्योतिषीय सिद्धांतों का एकीकरण किया। इसे ज्योतिषीय ज्ञान का सबसे महत्वपूर्ण कार्य माना जाता है। उनकी पंचसिद्धांतिका में पांच सिद्धांतों का वर्णन हैं। वराहमिहिर ने इन पूर्वप्रचलित सिद्धांतों को पुस्तक के रुप में लोगों के लिए उपलब्ध कराया। साथ ही उन्होंने इसमें अपने ज्ञान को भी समाहित किया है। फलित ज्योतिष के उनके तीन ग्रंथ लघुजातक, बृहत्जातक और बृहतसंहिता अति महत्वपूर्ण माने जाते हैं। वराहमिहिर ने अंकगणित, त्रिकोणमिति के साथ–साथ पर्यावरण विज्ञान, जल विज्ञान और भू–विज्ञान के विषय में कई अर्थपूर्ण जानकारियां दी हैं। भारतीय ज्ञान परंपरा में उनका नाम सदा अग्रणी श्रेणी में रहेगा।

(लेखक महाराजा अग्रसेन इंस्टीच्यूट ऑफ मैनेजमेंट स्टडीज़, इंद्रप्रस्थ विवि., दिल्ली में पत्रकारिता एवं जनसंचार विभाग में असिस्टेंट प्रोफेसर हैं)

ISSN No. 2581-3528

बैडमिन्टन की अपराजिता गोल्डन गर्ल आदित्या यादव

डॉ. नीलम कुमारी

कहते हैं कि प्रतिभा शब्दों की मोहताज नही होती...जब प्रतिभा सामने आती है तो इसका शोर दूर–दूर तक सुनाई देता है। उत्तर प्रदेश की ऐसी ही एक प्रतिभा अंतर्राष्ट्रीय बैडमिंटन खिलाड़ी हैं आदित्या यादव, जो बोल नहीं सकती और सुन नहीं सकती, लेकिन 12 वर्ष की छोटी सी उम्र में उन्होंने जो अपना स्थान बनाया है उसका शोर आज चारों ओर दिखाई और सुनाई पड़ रहा। आदित्या यादव ने मई 2022 में ब्राजील में संपन्न हुए डेफ ओलंपिक (बधिरों के लिए विश्व खेल) में बैडमिंटन के निर्णायक मैच में जापान को हराकर गोल्ड मेडल जीतकर देश का नाम गौरवान्वित कर स्वर्णिम अक्षरों में लिख दिया है। यह प्रथम बार है जब बैडमिंटन की टीम ने डेफ ओलम्पिक में भारत के लिए पहली बार में ही स्वर्ण पदक प्राप्त किया है। आदित्या यादव मूकबधिर ओलंपिक में भारत की ओर से खेलने वाली सबसे कम उम्र की खिलाड़ी भी हैं। इसके अतिरिक्त आदित्या ने हाल ही में थाईलैंड में आयोजित छठें एशिया पैसिफिक डेफ बैडमिंटन चौंपियनशिप में अंडर–21 वर्ग के युगल में स्वर्ण पदक, मिश्रित युगल में रजत पदक और एकल स्पर्धा में भी रजत पदक हासिल कर देश को तीन पदक दिला कर अपनी प्रतिभा का लोहा मनवाया है।

उत्तर प्रदेश में गुरु गोरक्षनाथ की तपोभूमि गोरखपुर के रहने वाले दिग्विजय नाथ यादव के घर जब नन्ही बिटिया का जन्म हुआ तो सभी खुश थे। बड़े प्यार से उन्होंने इसका नाम आदित्या रखा। परिवार में लक्ष्मी स्वरूपा बेटी का बड़े प्यार से लालन–पालन होने लगा, लेकिन कभी–कभी परिवार को लगता था कि इस बेटी के बोलने में कुछ कठिनाई है। पहले तो उन्हें लगा कि यह उनका संशय मात्र है और बचपन में बच्चे कभी–कभी देर से बोलना शुरू करते हैं लेकिन धीरे–धीरे उन्हें यह भी अनुभव होने लगा कि बालिका को जब कुछ कहते हैं तो वह ध्यान नहीं देती, तो उनकी चिंता बढ़ने लगी और उन्होंने इस बालिका पर विशेष ध्यान देना प्रारंभ किया। धीरे–धीरे आदित्या बड़ी होने लगी परन्तु परिवार को यह पता चलने में तीन साल लग गए कि आदित्या सुन और बोल नहीं सकती है, वह मूक और बधिर है। आदित्या की माता अंकुर और पिता दिग्विजय यह सोचकर बहुत अधिक परेशान हो गए कि अब उनकी इस मूक–बधिर बेटी का क्या होगा? लेकिन उन्हें क्या पता था कि उनकी यह बेटी एक दिन देश के लिए स्वर्ण पदक जीतकर एक इतिहास रच देगी।

पिता दिग्विजय नाथ को बेटी आदित्या की सुनने की कमी के बारे में जब पता चला तो खुद कमजोर होने के बजाय उन्होंने बेटी को मजबूत बनाने की ठानी और उसे सामान्य बच्चों से दो कदम आगे रखने का फैसला किया। रेलवे में कार्यरत आदित्या के पिता दिग्विजय नाथ यादव अच्छा बैडमिन्टन खेलते हैं, वे राष्ट्रीय स्तर के खिलाड़ी भी रह चुके हैं और उन्हें इसी की वजह से रेलवे में नौकरी मिली थी। एक दिन अपने पिता के साथ आदित्या ने बैडमिन्टन रैकेट पकडा, तो उसे देखकर दिग्विजय को लगा कि वो बैडमिंटन अच्छा खेल सकती है। आदित्या के पिता दिग्विजय नाथ यादव ने प्रारंभिक दिनों में बेटी के साथ खुद भी जी तोड़ मेहनत की इस से उत्साहित होकर पांच साल की उम्र में ही उन्होंने उसकी कोचिंग आरम्भ करा दी। पिता दिग्विजय ने आदित्या के बैडमिन्टन खेल के साथ उसके शारीरिक अभ्यास पर भी ध्यान केन्द्रित किया। पिता ने कोच की भूमिका में आकर फटकार भी लगाई और अनुशासन में रहना भी सिखाया तथा चाट, आइसक्रीम और मिठाई आदि से दूरी बनवाई। थोड़े समय में ही आदित्या कोर्ट में खेलने लगीं। रेलवे के सैयद मोदी स्टेडियम में में भी आदित्या को कोचिग दिलाई गयी।

आरम्भ में आदित्या को लोगों से अपेक्षा के अनुरूप सहयोग नहीं मिला, लेकिन उसने हार नहीं मानी और अपने खेल के प्रदर्शन से सबके मुंह बंद कर दिए। धीरे–धीरे जब आदित्या के प्रतिभा में निखार आने लगा तो उनके पिता ने राप्ती नगर के एक बैडमिंटन एकेडमी में उसका प्रवेश करा दिया और वहां आदित्य ने बैडमिंटन का विधिवत प्रशिक्षण लेना आरम्भ कर दिया। एक साल के बाद ही आदित्या की प्रतिभा दिखाई देने लगी और वह इस खेल में अपने से अधिक उम्र के खिलाड़ियों को मात देने लगी। वह जिस भी प्रतियोगिता अथवा टूर्नामेंट में भाग लेती, वहां से जीतकर ही लौटती। इसलिए छोटी सी उम्र में ही गोरखपुर के लोग आदित्या को गोल्डन गर्ल कहने लगे।

पूर्वोत्तर रेलवे में कार्यालय अधीक्षक के पद पर तैनात दिग्विजय नाथ यादव अपनी बेटी की इस उपलब्धि पर बहुत खुश हैं, उन्होंने एक बार नव भारत टाइम्स को ऑनलाइन बातचीत में अपनी बेटी आदित्या यादव के बारे में बताया था कि, "जब घर में बेटी पैदा हुई तो खुशियां मनाई गई। दो साल बाद पता चला की बेटी बोल नहीं सकती है, तो थोड़ा निराशा हुई। इसके ट्रीटमेंट के लिए दिल्ली तक गए। डॉक्टर ने बताया कि कॉकलियर इंप्लांट से आदित्या बोलने लगेगी, लेकिन इसके लिए 15 लाख रुपये का खर्च आएगा। कहीं से इंतेजाम भी किया, लेकिन जब देखा कि कुछ बच्चों का सर्जरी कर कॉकलियर इंप्लांट लगाया गया था, जिसके बाद उन बच्चों को और भी समस्या आने लगी थी। डर कर आदित्या को बिना ट्रीटमेंट के ही वापस गोरखपुर ले आए। दिग्विजय ने बताया कि बिटिया कभी बोल नहीं सकती यह जानकर दुःख हुआ था लेकिन आज उसकी सफलता हर तरफ गूंज रही है।"

गोरखपुर के राजेन्द्र नगर के श्रीविक्रम चंद्र मूक–बधिर विद्यालय में कक्षा आठ में पढ़ने वाली आदित्या ने मात्र 5 वर्ष की आयु में बैडमिंटन खेलना शुरू कर दिया था इसके बाद 9 वर्ष की आयु में राष्ट्रीय स्तर की खेल प्रतियोगिता में प्रतिभाग और मात्र 12 वर्ष की आयु में अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर वे खेल चुकी हैं। आदित्या यादव जब दस साल की थीं, तो उन्होंने चीन में आयोजित विश्व चैम्पियनशिप में अपनी प्रतिभा का लोहा मनवाया था। वहीं

ISSN No. 2581-3528

एक बार जब दिल्ली में आदित्या एक खेल प्रतियोगिता में अपनी खेल प्रतिभा का प्रदर्शन कर रही थी, तब देश की महान बैंडमिंटन खिलाड़ी साइना नेहवाल और पीवी सिंधू भी उनका प्रदर्शन देखकर दंग रह गई थीं।

आदित्या यादव बैडमिंटन को लेकर इतनी लगनशील है कि उसने पिछले दो साल से किसी भी दिन अवकाश नहीं रखकर निरंतर अभ्यास किया है, यहाँ तक कि कोरोना काल में भी वह अपने घर में दीवार पर अभ्यास करती थीं। आदित्या को अभी तक 20 से अधिक मेडल और पुरस्कार मिल चुके हैं। आदित्या अभी तक कई अवार्ड भी प्राप्त कर चुकी हैं इनमें–सेकेंड वर्ल्ड डेफ बूथ बैडमिंटन चैंपियनशिप, सिक्स नेशनल डेफ जूनियर सब जूनियर स्पोर्ट्स चैंपियनशिप, योनेक्स सनराइज हैमिश इंफ्रास्ट्रक्चर यूपी स्टेट, पीएनबी मेट लाइफ जुनियर बैडमिंटन चैंपियनशिप और रानी लक्ष्मी बाई अवार्ड प्रमुख हैं। आदित्या यादव महज 10 वर्ष की उम्र में वर्ष 2019 में चीनी ताइपे में आयोजित मूकबधिर विश्व चैंपियनशिप खेलकर देश की पहली महिला खिलाड़ी बनीं थीं। जिला और राज्य स्तर पर पिछले तीन वर्षों में आदित्या कभी कोई मुकाबला नहीं हारीं।

भारत को डेफ ओलम्पिक में प्रथम बार स्वर्ण पदक दिलाने वाली आदित्या यादव के सम्बन्ध में उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ जी ने भी ट्वीट में उल्लेख किया था कि, "बैडमिंटन स्पर्धा में भारतीय टीम को स्वर्ण पदक प्राप्त होने पर हार्दिक बधाई और ढेरों शुभकामनाएं! इसमें गोरखपुर की बेटी आदित्या यादव ने जो अद्वितीय प्रदर्शन किया है, वह असंख्य खिलाड़ियों व बच्चों के लिए एक बेमिसाल प्रेरणा है। हमें आप पर गर्व है।"

आदित्या यादव जैसी अपराजिता हमारी आने वाली पीढ़ी और आज के युवा वर्ग के लिए एक सन्देश देती है कि यदि हम मन में ठान लें तो कोई भी बाधा हमें लक्ष्य प्राप्ति से रोक नहीं सकती।

मंजिलें उन्हीं को मिलती है,
जिनके सपनों में जान होती है।
पंखों से कुछ नहीं होता,
हौसलों से उड़ान होती है॥

(लेखिका किसान पोस्ट-ग्रेजुएट कालिज सिम्भावली, हापुड़, चौधरी चरण सिंह विश्वविद्यालय मेरठ, उत्तर प्रदेश में अंग्रेजी विभाग की विभागाध्यक्ष हैं)

केशव संवाद मासिक पत्रिका के डिजिटल
प्लेटफॉर्म से जुड़ें एवं
केशव संवाद को सोशल मीडिया
पर **FOLLOW** करें।

केशव संवाद

FACEBOOK

Keshav Samvad @keshavsamvad @KeshavSamvad samvadkeshav

ISSN No. 2581-3528

विदेशी धरती पर क्रांतिकारियों के सबसे बड़े संरक्षक की कहानी

विष्णु शर्मा

विदेशी धरती पर जिसने सबसे पहले जगाई थी अलख, क्रांतिकारियों को दी स्कॉलरशिप, भारत की आजादी के मतवालों के लिए लंदन में बनवाया इंडिया हाउस, विदेशी जमीन पर क्रांतिकारियों के सबसे पहले और सबसे बड़े संरक्षक की कहानी, उनके अपने बच्चे नहीं थे, भारत मां के उन वीर सपूतों को भारत से स्कॉलरशिप देकर लंदन बुलाया, जो विदेशी धरती से आजादी की जंग में सहयोग देना चाहते थे। ना केवल स्कॉलरशिप दी, बल्कि उनके रहने के लिए लंदन के एक मशहूर इलाके में 'इंडिया हाउस' नाम का हॉस्टल भी बनवाया। आज वीर सावरकर, मदन लाल धींगरा जैसे देशभक्त लंदन जा सके, वहां रहकर पढ़ाई कर सके, वहां रहकर देश की आजादी की जंग में इतना अभूतपूर्व योगदान दे सके, तो उनके पीछे यही व्यक्ति था, उन सबका संरक्षक, गुरू श्यामजी कृष्ण वर्मा, पंडित नेहरू ने अपनी आत्मकथा में एक ऐसी घटना का जिक्र किया है, जिसे उस आत्मकथा को पढ़ने वाले 95 फीसदी लोग नजरअंदाज कर देते हैं। नेहरू जी ने लिखा है कि वो "जब 1927 में जेनेवा में अपनी पत्नी और बहन कृष्णा के साथ छुट्टियां मनाने गए थे, तब श्यामजी कृष्ण वर्मा से उनकी मुलाकात हुई थी। नेहरू जी ने लिखा है कि उनके पास बहुत पैसा था, लेकिन ट्राम के पैसे भी बचाने के लिए पैदल चलना पसंद करते थे। कंजूस तो थे ही, काफी शक्की भी थे।

श्यामजी ने उनसे कहा था कि मेरी सारी सम्पत्ति से एक ट्रस्ट बना दो, तुम ट्रस्टी बन जाओ ताकि जो भारतीय बच्चे विदेश में पढ़ना चाहते हैं, उनकी उससे मदद हो सके। श्यामजी की पत्नी के बारे में भी उन्होंने लिखा है कि कैसे वो महिलाओं की मदद के लिए काफी पैसा देना चाहती थीं।

नेहरू जी ने आगे ये बताया है कि श्याम जी को काफी शक होता था कि ब्रिटिश जासूस उनके पीछे लगे हैं, जबकि नेहरू जी को उनकी जान का कोई खतरा नजर नहीं आता था। नेहरू जी ने लिखा है कि उन्हें ये डर था कि कहीं उनके ट्रस्ट में उन पर पैसों की गड़बड़ी का आरोप ना लग जाए, इसलिए उन्होंने श्याम जी व उनकी पत्नी की कोई मदद नहीं की। कौन था वो व्यक्ति, इतना शक

क्यों करता था, हर वक्त अंग्रेजी जासूसों से इतना डरता क्यों था? आखिर इतना पैसा नेहरू जी के हवाले क्यों करना चाहता था? देश के बच्चों के लिए इतना पैसा क्यों दे रहा था? इतना तो अंदाज आप लगा ही सकते हैं कि करोड़ों रुपया होगा, तभी तो नेहरू जी उसकी जिम्मेदारी लेने से हिचक रहे थे।

उनके पास काफी पैसा रहा होगा, तभी तो 100 साल का किराया देकर स्विटजरलैंड की अस्थि बैंक में अपनी व पत्नी की अस्थियां 100 साल के लिए रखवा दी। उनको उम्मीद थी कि भारत माता का कोई लाल तो आएगा।

तारीख थी 30 मार्च 1930 और वक्त था रात के 11.30 बजे। जेनेवा के एक हॉस्पिटल में भारत मां के इस सच्चे सपूत ने आखिरी सांस ली और उसकी मौत पर लाहौर की जेल में भगत सिंह और उसके साथियों ने शोक सभा रखी, जबकि वो खुद भी कुछ ही दिनों के मेहमान थे।

श्यामजी कृष्ण वर्मा की अस्थियां जेनेवा की सेण्ट जॉर्जसीमेट्री में सुरक्षित रख दी गईं। बाद में उनकी पत्नी का जब निधन हो गया तो उनकी अस्थियाँ भी उसी सीमेट्री में रख दी गयीं। उन्होंने अपनी मौत से पहले ही उस अस्थि बैंक से ये समझौता किया हुआ था कि उनकी व पत्नी की अस्थियां वो 100 साल तक सुरक्षित रखेंगे, जब भारत आजाद होगा तो कोई भारत मां का सपूत आएगा और उन्हें विसर्जन के लिए ले जाएगा।

इस घटना को 17 साल गुजर गए, 1947 में देश आजाद हो गया, किसी को याद नहीं था कि उनकी अस्थियों को भारत वापस लाना है। आजादी के बाद भी पचपन साल और गुजर गए, पीढियां बदल गईं। लेकिन कोई नहीं आया। यूं पहले पीएम नेहरूजी भी उनके परिचित थे। 72 साल बाद इस गुजराती क्रांतिकारी की अस्थियों की सुध ली एक दूसरे गुजराती ने, गुजरात के तत्कालीन मुख्यमंत्री नरेन्द्र मोदी ने। 22 अगस्त 2003 को गुजरात के सीएम नरेन्द्र मोदी ने ये एक बड़ा काम किया, जेनेवा की धरती से खुद श्यामजी और उनकी पत्नी भानुमति की अस्थियां लेकर भारत आए।

मुंबई से श्यामजी कृष्ण वर्मा के जन्मस्थान मांडवी तक भव्य जुलूस के साथ उनका अस्थि कलश राजकीय सम्मान के साथ लेकर लाए थे मोदी। इतना ही नहीं वर्मा के जन्म स्थान पर भव्य स्मारक 'क्रांति–तीर्थ' बनाया। उसी क्रांति तीर्थ के परिसर के श्यामजी कृष्ण वर्मा कक्ष में उनकी अस्थियों को सुरक्षित रखा गया। मोदी ने क्रांति तीर्थ को भी हूबहू बिलकुल वैसा ही बनाने की कोशिश की जैसा कि श्यामजी कृष्ण वर्मा का लंदन में 'इंडिया हाउस' होता था, उसके बाहर पति पत्नी की मूर्तियां भी लगवाईं।

अब जानिए आखिर क्या था ये इंडिया हाउस? और आजादी की 75वीं सालगिरह के इस अमृत महोत्सव में श्यामजी कृष्ण वर्मा जैसे

ISSN No. 2581-3528

गुमनाम महानायक को क्यों याद किया जा रहा है? विदशी सरजमीं पर सक्रिय रहे भारतीय क्रांतिकारियों की चर्चा करते ही इंडिया हाउस की चर्चा जरूर होती है। लंदन के मंहगे इलाके में श्यामजी कृष्ण वर्मा ने इंडिया हाउस खोला और उसमें 25 भारतीय स्टूडेंट्स के लिए रहने–पढ़ने की व्यवस्था की, ताकि वो वहां रहकर लंदन में अपनी पढ़ाई पूरी कर सकें। इसके लिए श्यामजी कृष्ण वर्मा ने बाकायदा कई फेलोशिप भी शुरू कीं। ऐसी ही एक शिवाजी फेलोशिप के जरिए वीर सावरकर भी लंदन हाउस में रहने आए। इसी लंदन हाउस में सावरकर ने क्रांतिकारी मदन लाल धींगरा को हथियार चलाने की ट्रेनिंग दी, जिसने बाद में अंग्रेज अधिकारी वाइली की लंदन में ही गोली मारकर उसकी हत्या कर दी। साफ है कि इंडिया हाउस युवा क्रांतिकारियों का गढ़ बनता चला गया।

श्यामजी कृष्ण वर्मा का जन्म 4 अक्टूबर 1857 को कच्छ के मांडवी में हुआ था। पिता की जल्दी मृत्यु के बाद उनकी पढाई मुंबई के विल्सन कॉलेज से हुई। संस्कृत से उनका नाता यहीं जुड़ा, जो बाद में ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय में संस्कृत पढ़ाने के काम आया। उनकी पत्नी भानुमति एक सम्पन्न परिवार से थीं, इसी दौरान उनका सम्पर्क स्वामी दयानंद सरस्वती से हुआ और वो उनके शिष्य बन गए। पूरे देश में श्यामजी ने उनकी शिक्षाओं को प्रसारित करने के लिए दौरे किए। यहां तक कि काशी में उनका भाषण सुनकर काशी के पंडितों ने उन्हें 'पंडित' की उपाधि दे दी, ऐसी उपाधि पाने वाले वो पहले गैर ब्राह्मण थे।

उसके बाद वो ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय में पढ़ने लंदन चले गए, जहां संस्कृत के प्रोफेसर मोनियर विलियम्स ने उन्हें अपना सहायक बना लिया। वहां से श्यामजी ने ग्रेजुएशन किया और एम.ए. और बार एट लॉ ऑक्सफोर्ड से करने वाले वो पहले भारतीय बने। इस दौरान वो एशियाटिक सोसायटी के सदस्य बन गए, बर्लिन कांग्रेस ऑफ ओरियंटलिस्ट में भारत का प्रतिनिधित्व किया और सात साल लंदन रहने के बाद वो 1885 में भारत लौट आए।

ये वही साल था जब देश में कांग्रेस की स्थापना हुई थी, लेकिन वो कांग्रेस के, उसकी याचना की नीतियों के हमेशा आलोचक बने रहे। भारत आकर उन्होंने बतौर वकील अपना काम शुरू किया। बहुत जल्द उनको रतलाम राज्य का दीवान बना दिया गया। लेकिन तबियत खराब रहने के चलते उन्होंने वहां से विदा ले ली। उस दौर के उस छोटे से समय की नौकरी की ग्रेच्युटी उन्हें बत्तीस हजार रुपए मिली थी। उन्होंने अपनी रकम कॉटन के बिजनेस में लगा दी और खुद अपने गुरू स्वामी दयानंद के प्रिय शहर अजमेर में बस गए और ब्रिटिश कोर्ट में प्रेक्टिस करने लगे। इसी दौरान वो दो साल तक उदयपुर स्टेट के काउंसिल मेम्बर भी रहे। फिर वो गुजरात में जूनागढ़ स्टेट के दीवान भी बने। लेकिन एक ब्रिटिश एजेंट से इस कदर उनका झगड़ा हुआ कि ब्रिटिश सरकार के प्रति उनका मन नफरत से भर गया और उन्होंने इस नौकरी से भी इस्तीफा दे दिया।

श्यामजी कृष्ण वर्मा कांग्रेस के गरम दल को पसंद करते थे, लोकमान्य तिलक उनके आदर्श थे। 1890 में 'एज ऑफ कंसेंट बिल' वाले विवाद में तिलक का उन्होंने जमकर साथ दिया। पुणे के प्लेग कमिश्नर रैंड की हत्या के केस में भी वो चापेकर बंधुओं का समर्थन करने से पीछे नहीं हटे। लेकिन उनको लग गया था कि देश में रहकर अंग्रेजों का विरोध करना आसान नहीं, ये काम लंदन में रहकर थोड़ा आसानी से हो सकता है। 1900 में उन्होंने लंदन के पॉश इलाके हाईगेट में एक मंहगा घर खरीदा और उसका नाम 'इंडिया हाउस रख दिया' फिर तो वो घर भारत से लंदन आने वालों की सराय बन गया, गांधी, लाला लाजपत राय से लेकर तिलक और गोखले भी इंडिया हाउस में रुके, एक बार लेनिन भी।

शुरुआत में 25 भारतीय छात्रों को उस इंडिया हाउस में बतौर हॉस्टल रुकने का ठिकाना दिया गया, जो वहां रहकर पढ़ रहे थे। बाद में दुनियां के कई शहरों में इंडिया हाउस शुरु किए गए, पेरिस, सैनफ्रांसिस्को और टोक्यो में भारतीय क्रांतिकारियों ने अपनी रणनीतियां बनाने के लिए इनका उपयोग किया। इसके साथ ही श्यामजी कृष्ण वर्मा ने 'इंडियन सोशियोलॉजिस्ट' नाम का अखबार शुरु किया, जिसकी कॉपियां पूरे यूरोप में भेजी जाती थीं और बाद में इंडियन होमरूल संगठन की भी स्थापना की।

इंडिया हाउस ने कई क्रांतिकारियों को शरण दी जिनमें भीखाजी कामा, वीर सावरकर, मदन लाल धींगरा, वीरेन्द्र चट्टोपाध्याय आदि प्रमुख थे, बाद में लाला हरदयाल भी जुड़ गए और अमेरिका से भगत सिंह के गुरू करतार सिंह सराभा और विष्णु पिंगले की अगुआई में अमेरिका से गदर आंदोलनकारियों का जत्था 1915 में एक बड़ी क्रांति के लिए भारत भी आया, एक गद्दार की वजह से वो योजना फेल हो गई। उस गदर क्रांति को भी लाला हरदयाल और श्यामजी कृष्ण वर्मा ने सहायता दी थी। उससे पहले 'इंडियन सोशियोलॉजिस्ट' में उनके लिखे अंग्रेज सरकार विरोधी लेखों को लेकर श्यामजी अंग्रेजों के निशाने पर आ गए और साथ में उनका इंडिया हाउस भी। सीक्रेट सर्विस के एजेंट उन पर नजर रखने लगे। यहां तक कि उन पर कई तरह की पाबंदियां लगा दी गईं। इधर वीर सावरकर वहां आकर रहने लगे और कई साल तक रहे भी। सावरकर को स्कॉलरशिप लोकमान्य तिलक के कहने पर मिली थी।

श्यामजी ने इंडिया हाउस की जिम्मेदारी वीर सावरकर को सौंपी और वो 1907 में पेरिस निकल गए। हालांकि अंग्रेजी सरकार ने उनको वहां भी परेशान किया लेकिन श्याम जी ने कई फ्रांसीसी राजनेताओं से संपर्क बना लिया और वो वहीं से पूरे यूरोप के भारतीय क्रांतिकारियों को एकजुट करने, उनको मदद करने, कई भाषाओं में अखबार छपवाने आदि में मदद करने लगे। लेकिन ब्रिटेन और फ्रांस के बीच एक सीक्रेट समझौते के चलते उन्होंने पेरिस को भी छोड़ना बेहतर समझा और वो प्रथम विश्व युद्ध से ठीक पहले स्विटजरलैंड की राजधानी जेनेवा के लिए निकल गए। हालांकि वहां उन पर थोड़ी पाबंदियां थीं, फिर भी वो जितना हो सकता था, यूरोप में सक्रिय भारतीय क्रांतिकारियों की मदद करते रहे।

श्यामजी कृष्ण वर्मा को ये बाद में पता चला कि जिस प्रो–इंडिया कमेटी के प्रेसीडेंट डॉक्टर ब्रीस से वो सबसे ज्यादा बातचीत करते थे, वो एक ब्रिटिश सीक्रेट एजेंट था। इसलिए नेहरू जी का उन्हें शक्की समझना गलत था। इधर मदन लाल ढींगरा ने जैसे ही भारत सचिव वाइली की हत्या की, इंडिया हाउस अंग्रेजी सरकार के निशाने पर आ गया और 1910 में इसे बंद कर दिया गया। ये अलग बात है कि आज इंडिया हाउस को श्यामजी की बजाय वीर सावरकर की वजह से ज्यादा जाना जाता है, इंडिया हाउस की सामने की दीवार पर ही लिखा हुआ है, "Veer Sawarkar–Indian Patriot and Philosopher lived here"। लेकिन ये भी सच है कि अगर श्यामजी कृष्ण वर्मा नहीं होते तो सावरकर भी लंदन नहीं जा पाए होते और ना ही '1857 का स्वातंत्र्य समर' लिख पाते।

(पत्रकार एवं लेखक)

ISBN No. 2581-3528

विश्व को भारत की अनुपम देन : आयुर्वेद

डॉ. प्रताप निर्भय सिंह

हमें गर्व है कि हम न केवल इस पृथ्वी पर सबसे पुरातन संस्कृति का प्रतिनिधित्व करते हैं अपितु अनवरत रूप से आज भी उसके प्रवाह को अक्षुण्ण रखे हुए हैं। गणित, खगोल, भूगोल, ज्योतिष, विमानन, नौकायन, अस्त्र–शस्त्र, राजनीति, अर्थशास्त्र, शिल्प, तंत्र–मन्त्र–यंत्र, कला, काव्य, संगीत, नृत्य, साहित्य के साथ साथ धर्म–दर्शन, मानव जीवन के विभिन्न पहलुओं सहित नैतिक मूल्यों का अनुसंधान हमारे तत्ववेत्ताओं ने ध्यान की अवस्था में हजारों वर्ष पूर्व किया था। हमने सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को एक ईकाई माना है, अणु में विभु का दर्शन हमारे चिंतन का आधार है। भारतीय ज्ञान परम्परा में हमने जीव जगत और ब्रह्मांडीय उर्जा को सृष्टिकर्ता की समग्रता में स्वीकार किया है। यहाँ सब कुछ परस्पर संयुक्त है, आधुनिक विज्ञान भी इसे स्वीकार कर रहा है कि सम्पूर्ण अस्तित्व एक ही उर्जा का विभिन्न रूपों में स्पंदन है, जिसे ईश्वरीय लीला, महारास अथवा नटराज का ब्रह्मांडीय नृत्य स्वीकार किया गया है। आज हम भारत के द्वारा सम्पूर्ण विश्व को दी गयी एक ऐसी ही अनुपम देन के विषय में चर्चा करेंगे जिसे सम्पूर्ण विश्व ने शिरोधार्य किया है। वह अनुपम देन है आयुर्वेद। नाम से ही अभिहित है कि यह आयु का विज्ञान है। आयु अर्थात् जीवनकाल की लीला को अपनी सम्पूर्ण संभावनाओं के साथ आनंदपूर्वक व्यतीत करने की कला। स्वयं के भीतर स्थित परम चेतन तत्व के साथ लयबद्ध होकर जीवन जीना ....जिसे हमने स्वयं में स्थित होना कहा है..जो व्यक्ति इस अवस्था को प्राप्त होता है वही स्वस्थ अर्थात् स्वयं में स्थित कहलाता है, उसके शरीर एवं ब्रह्माण्ड की उर्जा में पारस्परिक संतुलन है। आज से लगभग 7000 वर्ष पूर्व भगवान राम के पिता महाराजा दशरथ के शव को भरत और शत्रुघ्न के ननिहाल से लौटने के काल तक आयुर्वेद के द्वारा ही संरक्षित रखा गया था। यह हमारी युगों की प्राचीन विरासत है।

दुर्भाग्य से पश्चिमी शिक्षा प्रणाली और पाश्चात्य चिंतन परम्परा नें हमें हमारी पुरातन विरासत से वंचित कर हमें विश्व समुदाय में दीन–हीन याचक सिद्ध करने का कुत्सित षड्यंत्र किया, और लम्बी पराधीनताकाल में हम अपनी संपदा से विमुख भी हो गए। परन्तु वर्तमान सांस्कृतिक नवजागरण काल में हम फिर से पल्लवित हो रहे हैं। जनसामान्य शरीर में रोग के अभाव को स्वास्थ्य समझता है, जबकि स्वास्थ्य की संकल्पना अभाव नहीं भाव प्रधान है। जीवन में सक्रियता, सकारात्मकता, मानवीय स्पंदन, प्रकृति के नियमों के साथ मन और शरीर का आनंदपूर्वक संचालन करते हुए कल्याणप्रद शतायु जीवन स्वास्थ्य का द्योतक है। संसार के सभी कार्यों की सिद्धि स्वस्थ शरीर से ही संभव है इसलिए शरीर के लिए आयुर्वेद का औषध विज्ञान प्राथमिक महत्व का

ISBN No. 2581-3528

माना गया है।

आयुर्वेद ईश्वरीय ज्ञान है जो ब्रह्माजी से प्रजापति, इंद्र देव, भगवान धन्वंतरि आदि से प्रारंभ हो गुरु शिष्य परम्परा द्वारा वर्तमान में भी विकसित हो रहा है। आयुर्वेद में प्रकृति के तीन मूल गुणों सत्व,रजस और तमस के समान वात पित्त कफ शरीर और मन के संतुलन के लिए प्रधान कारक हैं। इनके असंतुलन से ही हम रोगी होते हैं। इस परिवर्तन को उदाहरण से समझ सकते हैं, हम जानते हैं कि सभी प्रकार के रंग तीन मूल रंगों लाल, हरा और नीला से मिलकर बनते हैं, इन तीनो रंगों के अनुपात में परिवर्तन नए रंग को जन्म देता है, परिवर्तन के कम ज्यादा होने से एक ही रंग के अनेक शेड भी प्राप्त होते हैं, कंप्यूटर एवं मोबाइल पर हम स्वयं इसे देखते हैं। डिस्प्ले स्क्रीन की सभी प्रतिक्रिया एक ही विद्युत उर्जा की लीला है। अब समझिये कि ब्रह्माण्ड की आदिशक्ति ने स्वयं को ब्रह्मा, विष्णु, महेश के तीन मूल रूपों में प्रगट किया है, उनके भी उपरूप हैं जिन्हें हम अन्य देवी देवताओं के रूप में स्वीकारते हैं। हमारे ऋषि मुनियों ने अपने भीतर उस ब्रह्मांडीय उर्जा को, उसकी लीला का अनुसन्धान किया और यह पाया कि सब कुछ उस एक ही उर्जा का खेल है .... जीवन के भौतिक विकास हेतु इस शरीर–मन–मस्तिष्क का बहुत महत्व है, जिसे आधुनिक विज्ञान Psychosomatic यूनिट कहता है...इस समझ से ही आयुर्वेद का ज्ञान उनके भीतर अवतरित हुआ। प्रकृति के नियमों के अनुकूल जीवन जीना, प्राकृतिक दैनिकचर्या को अपनाना और मन–मस्तिष्क–शरीर के पोषण के लिए संतुलित आचार विचार, आहार विहार का अनुपालन करना आपको ब्रह्माण्ड की ऊर्जा से जोड़कर स्वस्थ और आनंददायक जीवन देता है, यही आयुर्वेद का आधार है। आयुर्वेद प्रकृति की उर्जा का विज्ञान है।

शरीर मन और मस्तिष्क की ऊर्जा को विकसित करने की अनेक पद्धतियाँ योग के विभिन्न रूप में प्रचलित हैं जो आपके शरीर के भीतर के प्राण का सम्पूर्ण अस्तित्वगत प्राण से योग कर देती हैं। ऐसी अवस्था में मनुष्य शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक और आध्यात्मिक गुण प्राप्त कर स्वयं, समाज, राष्ट्र और अखिल विश्व के कल्याण का मार्ग प्रशस्त करता है। स्वयं को स्वस्थ रखने के साथ साथ वह राष्ट्र और समाज के कल्याणार्थ अपने जीवन को समर्पित करता है। एक स्वस्थ व्यक्ति ही स्वस्थ चिंतन कर सकता है इसलिए आयुर्वेद के दर्शनशास्त्र में शरीर के स्वास्थ्य से अधिक व्यक्ति के मन, उसके विचारों के स्वस्थ होने पर बल दिया गया है। हमें आयुर्वेद को केवल शारीरिक स्वास्थ्य के कारक के रूप में नहीं लेना चाहिए, ऐसा करना इसका अवमूल्यन करना होगा। कोरोना महामारी के काल ने हमें सिखा भी दिया है कि आयुर्वेद और योग एक प्राकृतिक जीवन पद्धति है, जीवन दर्शन है। आयुर्वेद कहता है 'भोजनम् एव भेषजम' अर्थात् भोजन ही औषधि है, परन्तु क्या हमने इसे ठीक से समझा है?, यह भोजन केवल रसोईघर से संबंधित नहीं है, यदि ऐसा समझ लिया तो हमने आयुर्वेद को जाना ही नहीं। हमारी पाँचों ज्ञानेन्द्रियों के माध्यम से शरीर और मन में प्रवेश करने वाला तत्व उस इन्द्रिय का भोजन है, इसलिए हम जो सुन रहें हैं, देख रहे हैं, स्पर्श कर रहे हैं, घ्राण के माध्यम से जिस वातावरण में स्वांस ले रहे हैं और अंत में जिव्हा के माध्यम से जो चख रहे हैं यह सभी आहार अर्थात् हमारे मन–शरीर का भोजन है, पतंजलि अष्टांग योग में यही प्रत्याहार कहा गया है, यदि प्रत्याहार दूषित है तो यह विकार ही पैदा करेगा, इसलिए अनैतिक रूप से अर्जित धन से किया जाने वाला पोषण कुपोषण ही है, अनैतिकता, अधर्म, कर्तव्यहीनता, अप्राकृतिक भोजन (फास्ट फूड, मांसाहार, प्रदूषित विचार) आदि आहार हमारे मनोशरीर को विकृत करते हैं, योग के अंग यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान आयुर्वेद के ही पूरक तत्व हैं। ग्रह नक्षत्रों के शरीर–मन पर प्रभाव, पंच भूतों का शरीर पर प्रभाव आदि (ज्योतिष–वास्तु) भी आयुर्वेद से योजित है। समष्टिगत ब्रह्मांडीय ऊर्जा को समग्र दृष्टि से व्यष्टिगत जीवन ऊर्जा से अनुप्राणित करने का विज्ञान है आयुर्वेद।

आधुनिक वैज्ञानिकों के अनुसार ब्रह्मांड की हर वस्तु उसी एक ऊर्जा की अभिव्यक्ति मात्र है। हमारी संस्कृति में जो अस्तित्व की ऐसी अनुभूति कर लेता है, वही योगी है। आयुर्वेद के ज्ञान बिना योगी होना संभव नहीं। भारतीय दर्शन में यही योग की अंतिम उपलब्धि समाधि या मोक्ष है। आयुर्वेद सहित योग धर्म अर्थ काम का अनुपालन करते हुए मोक्ष प्राप्ति का मार्ग प्रशस्त करता है, जिस प्रकार से शरीर का स्व–तंत्र उसका निज स्वभाव है उसी प्रकार राष्ट्र और समाज का स्व–तंत्र उसका निज स्वभाव है जो राष्ट्र के कण कण को (अन्त्योदय) सशक्त कर उसे सम्पूर्ण विश्व के साथ एकाकार कर "वसुधैव कुटुम्बकम" की भावना के साथ जोड़ता है। इसीलिए हमारी संस्कृति में हमने अपने महापुरुषों को कर्मयोगी कहा है, जो अपने कर्मों के माध्यम से निम्नतम को उच्चतम से जोड़ने का कार्य करते हैं।

किसी भी राष्ट्र के लिए उसकी चिंतन पद्धति, शिक्षा प्रणाली, नीतियां और राष्ट्रीय मूल्य आदि प्रत्याहार हैं, जिस अनुपात में राष्ट्रदेव को ये मौलिक पोषक तत्व प्राप्त होते हैं राष्ट्रदेव का स्वास्थ्य उसी अनुपात में सुदृढ़ रहता है। इसके विपरीत नकारात्मक तत्वों से राष्ट्र का स्वास्थ्य प्रतिकूल होता है। आयुर्वेद का यह व्यापक दर्शन विश्व को भारत की अनुपम देन है।

अन्त्योदय, एक भारत श्रेष्ठ भारत, स्वच्छ भारत स्वस्थ भारत, आत्मनिर्भर भारत, समर्थ भारत जैसे संकल्प राष्ट्रीय स्वास्थ्य के लिए मौलिक विचार हैं, इन विचारों को स्वरुप प्रदान करने के लिए इस राष्ट्र को सामर्थ्यवान, ओजस्वी, चरित्रवान दृढ संकल्प वाले कर्मयोगियों की आवश्यकता है, भारत की संस्कृति के नवजागरणकाल में हमारी आयुर्वेदिक जीवन पद्धति भारत ही नहीं अपितु व्याकुल विश्व को भी नयी दिशा देने वाली है, अस्तु हम सबका दायित्व बनता है कि आयुर्वेद की भौतिक समझ से ऊपर उठकर हम आयुर्वेद की मूल संकल्पना को आत्मसात करें। मानव के भीतर की दिव्य शक्तियों को एक ईश्वर की अभिव्यक्ति स्वीकार कर कण कण में ईश्वर का साक्षात्कार करने वाली इस अनुपम संस्कृति का अनुभव हमें हमारे भीतर तभी होगा जब हम आयुर्वेद को जीवन में धारण करेंगे। आयुर्वेद के इतिहास को पढने की अपेक्षा हम अपने जीवन में वेद्विहित आयुर्वेद और योग को धारण करें....चर्चा विमर्श की अपेक्षा उसका पालन कर उसे अपनाकर तेजस्वी, स्वस्थ, बलशाली बन शतायु प्राप्त कर स्वयं, अपने समाज–राष्ट्र तथा सम्पूर्ण विश्व के कल्याण हेतु जीवन यज्ञ को पूर्णाहुत करें।

(जनरल फेलो, भारतीय दार्शनिक अनुसन्धान परिषद् -नई दिल्ली)

ISSN No. 2581-3528

अमृत महोत्सव में आजादी के अमृत मायने

डॉ. पूनम सिंह

उत्तरोत्तर आधुनिकतावादी दौर में सभी संस्कृतियां अपनी समावेशी, समन्वित मानवतावादी दृष्टिकोण को खोती जा रही हैं। युद्ध, आतंक, आशंका और भुखमरी के साये में सांस लेती मानव सृष्टि को अपने संस्कृति के उत्स को जानना बहुत जरूरी है। भारत बेशक अमीरी के इंडेक्स में काफी नीचे हो। लेकिन भारत की अंतरशक्ति सांस्कृतिक रूप से समृद्ध है। अतः भारतीय संस्कृति के मूल्य बोध को संरक्षित किए बिना भारत बोध को जागृत नहीं किया जा सकता है।

आजादी के अमृत मायने कालगत विश्लेषण से ज्यादा सांस्कृतिक पुनर्मूल्यन पर केंद्रित है। यह सांस्कृतिक विश्लेषण, पुनर्मूल्यांकन इसलिए है– ताकि युवा भारत अपनी सामाजिक, सांस्कृतिक अनुवांशिकी को जान पाये। कितनी अजीब बात है हमने मध्यकाल आक्रांताओं, भारतीय उपनिवेश काल की त्रासद कथाओं को पढ़ा, सुना और याद रखा। लेकिन भारत की स्वाधीनता के लिए संघर्ष करने वाले उन शहीदों की जयगाथाओं, जन–जन के सद प्रयत्नों, स्थानीय इतिहास को विस्मृत कर दिया। उसे केवल दंतकथाओं तक ही समेट दिया। जबकि ये ऐसी अंतः प्रेरक शक्तियां हैं जिसने हमारी राष्ट्रीय चेतना को संपुष्ट किया।

आजादी के जब्तशुदा साहित्य हमें इतिहास के उन मोड़ तक ले जाते हैं। जो इतिहास होकर भी इतिहास का हिस्सा कभी न बन सके। ऐसे ठहरे हुए अभिशप्त इतिहास को साहित्य ही पुनर्जीवित रखता है। इधर विचारधाराओं के बंधन ढीले हुए तो विमर्श संवाद करने लगे। इक्कीसवीं सदी विमर्शों पर सवार सदी है। आज इतिहास के पुनर्लेखन, पुनर्मूल्यांकन की बात उठाई जा रही है। इतिहास को विमर्श के नजरिए से देखने पर बल दिया जा रहा है। केवल आक्रमणों, लड़ाईयों और हमलावरों का इतिहास पढ़ा जाना न केवल हमारी दृष्टि को संकुचित और एकांगी करता है। बल्कि वहीं उसका पूरे जनमानस पर नकारात्मक असर पड़ता है। बहुल संस्कृति, बहुविविधता वाले इस देश में इतिहास को सांस्कृतिक दृष्टि से पढ़ा जाना जरूरी लगता है। क्योंकि उत्तर आधुनिकता के तीव्र संचारी, प्रौद्योगिकी दौर में सबसे ज्यादा खतरा सांस्कृतिक मूल्यों, अस्मिताओं पर बढे हैं। यह स्मृति विलोपन का वह तीव्रतर कालखंड है। जहां फासीवादी, आर्थिक साम्राज्यवादी निरंकुश सत्ताएं चाहती हैं कि हम अपनी मूल पहचान भूल जाएं।

ये सच है कि भूमंडलीकरण, उदारीकृत पूंजीवादी व्यवस्था ने वैचारिक विश्व को हमारे निकट ला दिया है। लोकल, ग्लोबल के अंतर्द्वंद्व हमें आभासी हार्दिकता का अहसास कराते हैं। विश्व संस्कृतियों के महा विलय में सब कुछ गड्ड मड्ड हुआ है। इसी में हमारी भारतीयता, राष्ट्रीयता भी संक्रमित और संकुचित हुई है। ऐसी स्थिति में यहीं हमें वर्तमान और युवा भविष्य पीढ़ी को भारतबोध के बारे में प्रबोधित करने की आवश्यकता है। मेरी दृष्टि में भारत बोध का अर्थ है भारतीय संस्कृति का मूल्य बोध। जिसकी जड़ें आध्यात्मिक, सांस्कृतिक राष्ट्रवाद में निहित है। भारत को भौगोलिक, भौतिक अर्थों में मूल्यांकित नहीं किया जा सकता। आजाद भारत के पचहत्तर वर्ष एक ऐसा परावर्तित प्रकाश है जिसके आलोक में हम भारत की स्वाधीनता आन्दोलन को देख सकते हैं। स्वाधीनता हमारे पूर्वजों के लिए नारा नहीं था। जीवन जीने की शर्त थी। स्वाधीन चेतना, जातीय अस्मिता के बोध के बिना हम राष्ट्र निर्माण में सक्रिय,तत्पर देशभक्त नायकों को पैदा नहीं कर सकते हैं।

उपनिवेशवाद के गहरे जख्म, गुलामी, पराधीनता, हताशा जैसे शब्दों, भावार्थों के साथ अब तक हमें रौंदते चले आ रहे हैं। आज यह सवाल कभी–कभी बेचैन करता है –हमें क्यों विदेशी जमीन पर इंडियन, हमारे देश को इंडिया कहा जाता है? क्या हम भारतवासी कहलाने में संकोच करें? हमारी नयी पीढ़ी को इस आत्मप्रवंचना में जीने की आवश्यकता ही क्यों पड़े? आजादी के अमृत मायने इन्हीं बुनियादी प्रश्नों का उत्तर ढूंढने का कार्य कर रहा है। इसे हम आज महज एक राजनीतिक ख्वाबी पुलाव, फील गुड प्रचार तंत्र दल या नारा कह कर पल्ला नहीं झाड़ सकते हैं। यह राष्ट्रीय दायित्व बोध की पुकार है– गुलामी के गरल दंश से हम अपनी राष्ट्रीय अस्मिता, वैश्विक पहचान बचाये रखें। आजादी के अमृत महोत्सव की मनोभावना है – सीमांत पर खड़े उस अंतिम व्यक्ति से लेकर सर्वसामान्य, सर्वसामर्थ्यवान व्यक्ति को भारतीयों और भारतीय होने के अभिप्रेत से जोड़ना है।

भारतीय और इंडियन समानार्थी लगते जरुर हैं। लेकिन ये अटपटे पर्याय ज्यादा हैं। इनमें वहीं विभाजक रेखा खिंचती महसूस होती है। जो मेकमोहन रेखा, रेडक्लिफ रेखा से सरहद बांटने, काटने महसूस होता है। भारत बोध का मुख्य अभिप्रेत अविभाजित, अखंडता, एकता। वैदिक ज्ञान विज्ञान, दर्शन और सामासिक, बहुसांस्कृतिक धर्मिता और कदाचित संत कवियों का मानवीय दृष्टिकोण। इन बहुवैविध्यता का मूल सार भारत बोध है। हजारों वर्षों की सांस्कृतिक प्रक्रिया में भारत की समन्वयवादी चेतना, समरसता का आनन्दवाद की प्रतिष्ठा। इसे किसी राजनैतिक दल का प्रोपेगेंडा न समझकर राष्ट्रीय अस्मिता का उद्घोष मानना चाहिए। यह दृष्टिकोण बाजारवादी, उपभोक्तावादी मूल्यविहीन सदी को सही मार्गदर्शन दे सकेगी।

भारत बोध से आशय यह भी है–हमारी समृद्ध वैदिक परम्परा की वैज्ञानिक विरासत को पुनर्जीवित करने का प्रयास, एक यत्न जो भारत, भारतीयता को उत्तर आधुनिक संदर्भ में व्याख्यित कर सकें। यह अमृत संकल्पना अतीत के प्रति आत्ममुग्धता नहीं है। बल्कि उसी तरह का नवजागरण है जैसा आजादी के प्रथम एवं द्वितीय दौर में राष्ट्रीय चेतना।

वैश्विक आतंकवाद और साम्प्रदायिकता, विसंस्कृतिकरण के विरुद्ध अमृत महोत्सव उस मूल्यवादी चेतना की सवेष्ट पुकार है। जिसे विश्व शांति, मानवता के लिए सुनना अपरिहार्य है। भारतीय संस्कृति में राष्ट्र की परिकल्पना एक परिवार की तरह की गई है। जिसकी आधारशिला "बसुधैव कुटुम्बकम्" पर आधारित है। एक ऐसा राष्ट्र जो आध्यात्मिक रूप से शक्ति चालित हुए भी पूरी दुनिया का पोषण, संरक्षण कर सकें। हमारा वैदिक चिंतन

ISSN No. 2581-3528

आज़ादी का अमृत महोत्सव

देवताओं की तरह मनुष्य को भी अमरत्व प्रदान करता है। असतो मां सद्गमय। यह आर्ष वाक्य एक आह्वान है जो यह हमें याद दिलाता है कि हमारा प्रत्येक कर्म सभी के कल्याण के लिए है। फिर चाहे वह अंतः विचार हो या संकल्प या भौतिक जगत के उपक्रम–सत्यनिष्ठता ही मूल धर्म है। इसलिए इसका उत्प्रेरक है कि पहले अपने सत्य को स्थापित कीजिए, फिर आसपास की दुनिया देखिए। असत्य से सत्य की ओर, अज्ञान से ज्ञान की ओर और मृत्यु से अमरत्व की ओर चलना हमारे भारतीय जीवन जीने का तरीका है, आचरण है। भारतीय जीवन दर्शन में मृतप्राय होना जड़ होना है। भारतीय दर्शन में अमरत्व की अवधारणा वह आचरण, संस्कार, जीवन पद्धति है। जो सभी जीवों को, चराचर जगत को समभाव से देखता है। किसी की स्वायत्तता को खंडित नहीं करता है और ना ही पराधीन करता है। ना अंकुश ना दमन जैसे नकारात्मक भावों विचारों से उन पर शासित होता है।

अमरत्व भारतीय संस्कृति की वह प्राण चेतना है– जो हमें सभी बंधनों से मुक्त कर माननीय बने रहने की दिशा में ओर प्रेरित करता है और मनुष्यता के लिए दृढ़ संकल्पित करता है। भारतीय संस्कृति में नश्वरता जीवन का वह सत्य है जो अमरता के बरक्स जीवन को प्रबोधित करता है कि भौतिक जगत में सब कुछ नश्वर है। सत्ता, शक्ति, वर्चस्व सब व्यर्थ। इसलिए कबीर के शब्दों में कहूं तो "का मांगू कछु थिर न धराई।" जब कुछ भी स्थाई नहीं है तो नाशवान होने से बेहतर है कि अमरता की ओर आगे बढ़ें। अर्थात् मनुष्यता की ओर बढ़े।

पूरी दुनिया आर्थिक उदारीकरण, उपभोक्तावादी, पूंजीवाद के बहुविधि कुचक्र में फंसा हुआ है। उससे मुक्ति का दर्शन हमें इन्हें मूल मंत्रों में मिलता है। सच्चे अर्थों में यही है भारत बोध है और यही आजादी के अमृत मायने हैं। जिसे शिरोधार्य करने की आवश्यकता है।

(लेखिका शम्भु दयाल पी जी कालेज गाजियाबाद में हिन्दी विभाग में असिस्टेंट प्रोफेसर हैं)

केशव संवाद पत्रिका की ओर से
सभी पाठकों एवं विज्ञापन दाताओं को
दशहरा एवं दीपोत्सव
की हार्दिक शुभकामनाएं

ISSN No. 2581-3528

उत्सवों की समाज निर्माण में भूमिका

अनुपमा अग्रवाल

भारतीय संस्कृति में उत्सवों एवं त्योहारों का विशेष महत्व है, जिन्हें प्रत्येक धर्म, जाति, वर्ग, क्षेत्र के लोग अपनी परंपरानुसार अपने अपने रीतिरिवाजों से मनाते हैं, जो अनेकता में एकता का परिचायक होने के साथ हमारे देश की राष्ट्रीय एकता व अखंडता को भी परिलक्षित करते हैं। भारत में मनाए जाने वाले सभी उत्सव और त्योहारों का संबंध यहां की ऋतुओं, फसल कटाई व महत्वपूर्ण तिथियों से जुड़ा हुआ है, जो मानव को अपने सामाजिक दायित्वों का बोध कराने के अतिरिक्त अर्थव्यवस्था को गति प्रदान करने में अहम भूमिका निभाते हैं। भारत में मनाए जाने वाले कुछ एक त्योहार और उत्सव तो ऐसे हैं जिन्हें पूरा देश मनाता है पर ये अलग–अलग राज्यों में अलग नाम व विभिन्न प्रकार से हर्षोउल्लास के साथ मनाए जाते हैं। सामूहिक रूप में मनाए जाने वाले सभी उत्सव और त्योहार मानव को धार्मिक रूप से एकजुट करके समाज निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

उत्सव और त्योहार जहां परिवार में खुशी का माहौल पैदा करते हैं वहीं अपनी परम्पराओं, संस्कारों व मान्यताओं को अगली पीढ़ी में बढ़ाने का काम भी करते हैं जिससे समाज सशक्त और मजबूत बनता है। चूंकि मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है और वह समाज से कट कर नहीं रह सकता ऐसे में समाज के प्रति अपने कर्तव्यों व उत्तरदायित्व को निभाने का उत्सव और त्योहार अच्छा माध्यम हैं। आज की युवा पीढ़ी पाश्चात्य संस्कृति से आकर्षित व प्रभावित होकर मदर्स डे, फादर्स डे, फ्रेंड्स डे, वेलेंटाइन डे जैसे दिवसों पर सोशल मीडिया के माध्यम से मैसेज भेजकर त्योहार की इतिश्री कर रही है, जिनसे न तो कोई सार्थक सन्देश मिलता है और न उनको मनाने के पीछे कोई सामाजिक उद्देश्य निहित है। जबकि प्रत्येक भारतीय उत्सव और त्योहार कोई न कोई सन्देश, सीख, संस्कार देने वाले और उद्देश्यपरक हैं। जैसे दीपावली और दशहरा असत्य पर सत्य की विजय के रूप में मनाया जाता है, तो होली सभी वैर भाव भुला कर एकरूप होने का संदेश देती है इसी तरह गणेश चतुर्थी एकजुटता व समन्वय का भाव सिखाती है, जबकि लोहड़ी नई फसल के आगमन व बसंत पंचमी, बसंत ऋतु के स्वागत में मनाई जाती है। इसी तरह रक्षा बंधन, मकर संक्रांति, पोंगल आदि सभी त्योहार व उत्सवों को मनाने के पीछे कोई न कोई सामाजिक उद्देश्य अवश्य निहित है। समाज को सामूहिकता की ओर ले जाना, समाज में फैली विकृतियों को दूर कर उसे प्रगति के मार्ग पर ले जाना ही भारतीय उत्सव

व त्योहारों का उद्देश्य है।

सामाजिक सम्बन्धों के आधार पर ही मजबूत समाज का निर्माण होता है, सामाजिक एवं धार्मिक उत्सवों की निरन्तरता ही सामाजिक संबंधों की विविधता को कायम रखती है, जो हमारे समाज की पहचान के साथ भारतीय सनातन संस्कृति के प्राण भी हैं। ये उत्सव और त्योहार ही हैं जो सामाजिक संबंधों के निर्माण, निरन्तरता व जीवंतता का कारण बने हुए हैं। अन्यथा प्राणी की जिंदगी नीरस, बेरंग, उद्देश्यहीन व समाज बिखराव की ओर चला जायेगा। भारत के हर उत्सव और त्योहार के अवसर पर विभिन्न व्यंजन नृत्य, गायन, पहनावा व संस्कार विधि भी अलग–अलग देखने को मिलती हैं जो भारतीय संस्कृति को अलग पहचान देने के अतिरिक्त हमारी आस्था और ईश्वर के प्रति विश्वास को दृढ़ता प्रदान करती है। जैसे ऋतुओं के अनुसार मकर संक्रांति पर तिल गुड़ के लड्डू बनाने का चलन है जो मौसम के अनुरूप शरीर को ताकत देने के साथ स्वास्थ्य के लिए भी लाभदायक होते हैं इसी तरह शरद पूर्णिमा पर बनाई जाने वाली खीर शरीर को शीतलता प्रदान करती है। पूरी दुनिया में भारत इकलौता ऐसा देश है जहां मौसम के बदलाव की सूचना त्योहार या उत्सव के रूप में देने की परंपरा है।

उत्सव और त्योहारों को भारतीय संस्कृति में सदैव से संयुक्त अथवा सामूहिक रूप से मनाने की परंपरा चली आ रही है जिससे समाज में सामाजिक समरसता का भाव उत्पन्न होने के साथ परिवारों में संयुक्त परिवार की परंपरा को जीवन्त रखे है। भारत में आज भी ज्यादातर लोग होली दीपावली, आदि पर्व संयुक्त रूप से पूरे परिवार के साथ मनाते हैं। व्यस्तता भरी जिंदगी में कुछ सुकून के पल परिवार के साथ बिताने से व्यक्ति मानसिक रूप से तनाव मुक्त तो होता ही है साथ ही आपसी स्नेह और संबंध भी मजबूत बने रहते हैं, जो एक सभ्य, सुसंगठित समाज के निर्माण का आधार बनते है।

उत्सव और त्योहार स्वच्छता का संदेश प्रेषित करने के साथ रोजगार परक बन देश की अर्थव्यवस्था को गति प्रदान करने वाले भी हैं जिससे समाज न केवल संपन्न होता है बल्कि समृद्धि की ओर भी अग्रसित होता है। दीपावली पर घरों और प्रतिष्ठानों पर मरम्मत और सफाई से न केवल मजदूरों को काम मिलता है बल्कि स्वच्छता, स्वास्थ्य की दृष्टि से भी अति आवश्यक है। चूंकि ऋतु बदलने पर रोगों के फैलने की संभावना ज्यादा रहती है ऐसे में स्वच्छता का ध्यान रखना अति आवश्यक हो जाता है। जबकि त्योहारों पर की जाने वाली अतिरिक्त खरीददारी रोजगार सृजन करने व अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ कर देश को उन्नति के मार्ग पर अग्रसित करती है।

उत्सव और त्योहार हजारों साल के अनुभव एवं अनुसंधान के आधार पर भारतीय जीवन पद्धति का हिस्सा हैं, जो विविधताओं से भरे देश को एक सूत्र में पिरोकर रखने का कार्य कर रहे हैं तथा आमजन के बीच आपसी वैमनस्य को कम कर सामाजिक सौहार्द को बढ़ाने के साथ समाज में सामाजिक समरसता का भाव पैदा कर राष्ट्रहित में एकजुट होकर राष्ट्र को मजबूत बनाने का महत्वपूर्ण कार्य कर रहे हैं।

(समाजसेवी एवं लेखिका)

ISSN No. 2581-3528

आर्थिक महाशक्ति बनता भारत

आशीष कुमार

यह समाचार प्रत्येक भारतीय के लिए गौरवान्वित करने वाला है कि भारत इंग्लैंड को पछाड़कर विश्व की पांचवी आर्थिक महाशक्ति बन गया है। साथ ही विश्व की आर्थिक संस्थाओं द्वारा आंकड़ों के आधार पर यह अनुमान लगाया जा रहा है कि 2029 तक भारत विश्व की तीसरी बड़ी आर्थिक महाशक्ति बन जाएगा। वित्तीय वर्ष 2022–23 अप्रैल जून की तिमाही में देश की सकल घरेलू विकास दर 13.5 फीसदी हो गई, जो पिछली चार तिमाहियों में सबसे तेज है। विकास दर में यह तेजी कृषि एवं विनिर्माण में सुधार तथा सेवा क्षेत्र के पूरी तरह से खुल जाने के कारण हुई है। कॉरपोरेट बैलेंस सीट में सुधार हुआ है और बैंकों ने अपने एनपीए को साफ किया है। देश निर्माण गतिविधि, मजूबत आवास मांग, व्यापार, होटल, परिवहन, सेवा और संचार आदि क्षेत्रों में बेहतर प्रदर्शन कर रहा है।

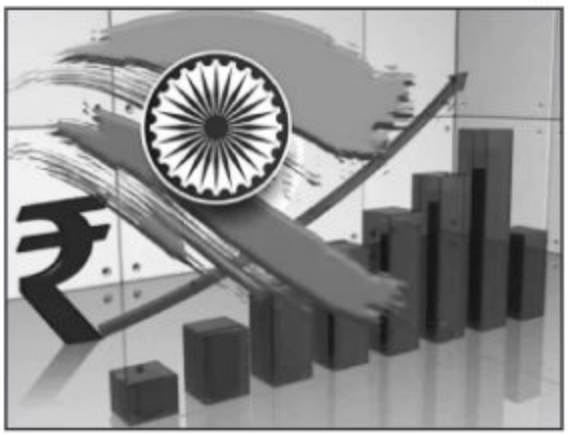

यह आजादी के अमृत महोत्सव में भारत के खोए हुए आर्थिक प्रभुत्व गौरव को पुनः प्राप्त करने की यात्रा है। कोरोना और विश्व में चल रही आर्थिक मंदी के बावजूद भारत का आर्थिक महाशक्ति के रूप में उभरना एक सुखद अनुभव है। पिछले आठ वर्षों में सरकार की विकास समर्थन नीतियां एक ऐसा मंच तैयार कर रही हैं, जिसके कारण विश्व आर्थिक संस्थाएं इक्सवीं सदी को भारत की सदी कह रही हैं।

भारत ने व्यापारिक सुगमता बढ़ाने के लिए नीतिगत स्तर पर प्रशंसनीय पहल की हैं। इससे विनिर्माण और निर्यात क्षेत्र में तेजी आई है। आत्मनिर्भर भारत, मुद्रा ऋण, मेक इन इंडिया फॉर वर्ल्ड जैसी क्षेत्रवार लक्षित उत्पादन संबंधी प्रोत्साहन योजनाएं, रक्षा उपकरणों का देश में उत्पादन, प्रतिबंधित आयात सूची एवं उपभोक्ता इलेक्ट्रॉनिक उत्पाद के क्षेत्र में सरकार द्वारा उठाए गए मजबूत कदम भारत के स्वर्णिम आर्थिक भविष्य का निर्माण कर रही हैं।

आजादी की लड़ाई में सक्रिय भूमिका निभाने दादाभाई नौरोजी ने अपनी पुस्तक 'पॉवर्टी एंड अनब्रिटिश रूल इन इंडिया' में धन के निष्कासन का सिद्धांत दिया था। उनके विचार थे कि ब्रिटिश हुकूमत भारत का आर्थिक शोषण कर रही हैं। भारतीय कुटीर और लघु उद्योगों को योजनाबद्ध तरीके से खत्म किया गया था। भारत का अथाह धन इंग्लैंड जा रहा है। लोगों का जीवन स्तर गिरता चला गया और गरीबी बढ़ती गई। दादाभाई नौरोजी ब्रिटिश पार्लियामेंट में सांसद भी रहे। उन्होंने अपनी रिपोर्ट को ब्रिटिश पार्लियामेंट में भी रखा था। यह समय का चक्र है आज वही इंग्लैंड आर्थिक मंदी से जूझ रहा है और भारत अपने पुराने वैभव की ओर मजबूती के साथ लौट रहा है।

मोदी सरकार ने 2025 तक भारत को 5 ट्रिलियन डॉलर यानी 5 लाख करोड़ डॉलर की अर्थव्यवस्था बनाने का लक्ष्य निर्धारित किया है। कोरोना काल के दौरान अर्थव्यवस्था को जो हानि हुई उसके कारण इस लक्ष्य को हासिल करने में भारत को थोड़ा और जोर लगाना होगा। आईएमएफ का भी मानना है कि कोरोना की आर्थिक मंदी को चुनौती पूर्ण तरीके से सामना करते हुए भारत दुनिया में सबसे अधिक आर्थिक विकास दर हासिल करते हुए आगे बढ़ रहा है। आईएमएफ के अनुसार 2028–29 तक भारत 5 ट्रिलियन डॉलर की अर्थव्यवस्था हो जाएगा।

कोरोना के कारण लक्ष्य को हासिल करने में संभावित देरी की अटकलों को दूर करने के लिए भी भारत सरकार ठोस कदम उठा रही है। इसके लिए प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने पीएम गतिशक्ति योजना भी प्रारंभ की है। पीएम गतिशाक्ति योजना का मास्टर प्लान तैयार किया है। उद्योगों को गति देने के लिए इसमें अनिवार्य रूप से रेलवे और रोडवेज सहित 16 मंत्रालयों को एकीकृत योजना और बुनियादी ढांचा कनेक्टिविटी योजनाओं के समन्वित क्रियान्वयन के लिए एक साथ लाने पर जोर है। इसके जरिए जमीनी स्तर पर काम में तेजी लाना, लागत को कम करना और रोजगार बढ़ाने पर जोर है। समाज में अंतिम पायदान पर खड़े व्यक्ति के विकास की चिंता भी सरकार द्वारा की जा रही है, उज्ज्वला योजना, प्रधानमंत्री आवास योजना, पीएम गरीब कल्याण योजना आदि चलायी जा रही हैं। किसानों के हितों का ध्यान रखने हुए पीएम किसान सम्मान निधि और पीएम फसल बीमा योजना चल रही हैं। इनके सकारात्मक परिणाम सबके सामने हैं। सरकार द्वारा समाज के प्रत्येक व्यक्ति का योगदान राष्ट्र के विकास में सुनिश्चित करने का प्रयास किया जा रहा है।

भारतीय स्टेट बैंक के आर्थिक अनुसंधान विभाग द्वारा जारी एक शोध रिपोर्ट में कहा गया है कि भारत 2029 तक तीसरी सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था बनने के लिए तैयार है। आंकड़ों के अनुसार अगस्त में जीएसटी संग्रह 1.4 लाख करोड़ रुपये रहा जबकि सकल स्थिर पूंजी निर्माण अप्रैल–जून में 34.7 फीसदी बढ़ा। जो 10 साल में सबसे अधिक है। इससे भारतीय अर्थव्यवस्था में तेजी का संकेत मिल रहा है। आर्थिक विशेषज्ञों के अनुसार दुनिया में तेजी से बढ़ रही अर्थव्यवस्थाओं में चीन का मुकाबला करने में भारत ही सक्षम होगा। अभी भी इस तिमाही में भारत की वृद्धि दर विश्व की सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था वाले देशों में दूसरे नंबर पर काबिज चीन से कहीं आगे है। सालाना आधार पर भी भारत चीन के मुकाबले आगे ही रहेगा। यानी हम सही रास्ते पर हैं केवल हमें आगे बढ़ते जाना है।

(लेखक मीडियाविद हैं)

ISSN No. 2581-3528

व्यस्त और रंगीन सांस्कृतिक गतिविधियों का अक्टूबर

नीलम भागी

व्रत और त्यौहारों से भरा मानसून के अंत से शुरू होकर शीत ऋतु का आगमन, एक अक्तूबर की शुरुआत ही दुर्गा पूजा से है। यह भारतीय उपमहाद्वीप व दक्षिण एशिया में मनाया जाने वाला सामाजिक–सांस्कृतिक धार्मिक वार्षिक हिन्दू पर्व है। पश्चिम बंगाल, असम, बिहार, झारखण्ड, मणिपुर, ओडिशा और त्रिपुरा में सबसे बड़ा उत्सव माना जाता है। नेपाल और बंगलादेश में भी बड़े त्यौहार के रुप में मनाया जाता है। दुर्गा पूजा पश्चिमी भारत के अतिरिक्त दिल्ली, उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र, गुजरात, पंजाब, कश्मीर, आन्ध्र प्रदेश, कर्नाटक और केरल में भी मनाया जाता है। हिन्दू सुधारकों ने ब्रिटिश राज में इसे भारतीय स्वतंत्रता आंदोलनों का प्रतीक भी बनाया। दिसम्बर 2021 में कोलकता की दुर्गापूजा को यूनेस्को की अगोचर सांस्कृतिक धरोहर की सूची में शामिल किया गया है।

आंध्र प्रदेश और तेलंगाना राज्य की महिलाएं बड़े उत्साह से पूरे नौ दिन बतुकम्मा महोत्सव मनातीं हैं। ये शेष भारत के शरद नवरात्रि से मेल खाता है। प्रत्येक दिन बतुकम्मा उत्सव को अलग नाम से पुकारा जाता है। जंगलों से ढ़ेर सारे फूल लाते हैं। फूलों की सात पर्तों से गोपुरम मंदिर की आकृति बनाकर बतुकम्मा अर्थात् देवियों की माँ पार्वती महागौरी के रूप में पूजा जाता है। लोगों का मानना है कि बतुकम्मा त्यौहार पर देवी जीवित अवस्था में रहती हैं और श्रद्धालुओं की मनोकामना पूरी करतीं हैं। त्योहार के पहले दिन सार्वजनिक अवकाश होता है। नौ दिनों तक अलग–अलग क्षेत्रीय पकवानों से गोपुरम को भोग लगाया जाता है। और इस फूलों के उत्सव का आनन्द उठाया जाता है। नवरात्रि की अष्टमी को यह त्यौहार दशहरे से दो दिन पहले 3 अक्तूबर को समाप्त हैं।

बतुकम्मा से मिलता जुलता, तेलंगाना में कुवांरी लड़कियों द्वारा बोडेम्मा पर्व मनाया जाता है। जो सात दिनों तक चलने वाला गौरी पूजा का पर्व है। महाअष्टमी और महानवमी को नौ बाल कन्याओं की पूजा की जाती है जो देवी नवदुर्गा के नौ रूपों का प्रतिनिधित्व करतीं हैं।

26 सितम्बर से 5 अक्तूबर तिरूमाला में ब्रह्मोत्सव मनाया जा रहा है किंवदंती है कि भगवान ब्रह्मा ने सबसे पहले तिरूमाला में ब्रह्मोत्सव मनाया था। तिरूमाला में तो हर दिन एक त्यौहार है और धन के भगवान श्री वेंकटेश्वर साल में 450 उत्सवों का आनन्द लेते हैं। लेकिन सबसे महत्वपूर्ण ब्रह्मोत्सव है। जिसका शाब्दिक अर्थ है 'ब्रह्मा का उत्सव' जिसमें हजारों श्रद्धालू इस राजसी उत्सव को देखने जाते हैं।

दशहरे की छुट्टियों में जगह–जगह रात को रामलीला मंचन मंच पर होता है। जिसे बच्चे बहुत ध्यान से देखते हैं। लौटते हुए रामलीला के मेले से गत्ते, बांस, चमकीले कागजों से बने चमचमाते धनुष बाण, तलवार और गदा आदि शस्त्र खरीद कर लाते और वे दिन में पार्कों में रामलीला का मंचन करते हैं। जिसमें सभी बच्चे कलाकार होते हैं। उन्हें दर्शकों की जरुरत ही नहीं होती। इन दिनों सारा शहर ही राममय हो जाता है।

बहू मेला जम्मू और कश्मीर, जम्मू में आयोजित होने वाले सबसे बड़े हिंदू त्यौहारों में से एक है। यह जम्मू के बहू किले में साल में दो बार नवरात्रों के दौरान मनाया जाता है। इस दौरान पर्यटक और स्थानीय लोग रंगीन पोशाकें पहनते हैं और मेले में खरीदारी करते हैं और खाने के स्टॉल में वहाँ के पारम्परिक खानों का स्वाद लेते हैं।

शरदोत्सव दुर्गोत्सव एक वार्षिक हिन्दू पर्व है। जिसमें प्रांतों में अलग–अलग पद्धति से देवी पूजन होता है। गुजरात का नवरात्र में किया जाने वाला गरबा नृत्य तो पूरे देश का हो गया है। जो नहीं करते वे देखने जाते हैं।

तमिलनाडु, आंध्रप्रदेश, कर्नाटक में दशहरे से पहले नौ दिनों को तीन देवियों की समान पूजा के लिए तीन–तीन दिनों में बांट दिया है। पहले तीन दिन धन और समृद्धि की देवी लक्ष्मी को समर्पित हैं। अगले तीन दिन शिक्षा और कला की देवी सरस्वती को समर्पित है और माँ शक्ति दुर्गा को समर्पित हैं। विजयदशमी का दिन बहुत शुभ माना जाता है। बच्चों के लिए विद्या आरंभ के साथ कला में अपनी अपनी शिक्षा शुरु करने के लिए इस दिन सरस्वती पूजन किया जाता है।

महाभारत के रचयिता वेदव्यास महाभारत के बाद मानसिक उलझनों में उलझे थे, तब शांति के लिये वे तीर्थाटन पर चल दिए। दंडकारण्य (बासर का प्राचीन नाम) तेलंगाना में, गोदावरी के तट के सौन्दर्य ने उन्हें कुछ समय के लिए रोक लिया था। यहीं ऋषि वाल्मिकी ने रामायण लेखन से पहले, माँ सरस्वती को स्थापित किया और उनका आशीर्वाद प्राप्त किया था। मंदिर के निकट वाल्मीकि जी की संगमरमर की समाधि है। बासर गाँव में आठ तालाब हैं। जिसमें वाल्मीकि तीर्थ है। पास में ही वेदव्यास गुफा है। लक्ष्मी, सरस्वती, दुर्गा की मूर्तियाँ हैं। पास ही महाकाली का विशाल मंदिर है। नवरात्र में बड़ी धूमधाम रहती है। आज उस माँ शारदे निवास को 'श्री ज्ञान सरस्वती मंदिर' कहते हैं। हिंदुओं का महत्वपूर्ण संस्कार 'अक्षर ज्ञान' विजयदशमी को मंदिर में मनाया जाता है जो बच्चे के जीवन में औपचारिक शिक्षा को दर्शाता है। बासर में गोदावरी तट पर स्थित इस मंदिर में बच्चों को अक्षर ज्ञान से पहले अक्षराभिषेक के लिए लाया जाता है और प्रसाद में हल्दी का लेप खाने को दिया जाता है।

विजयदशमी को देश में कहीं महिषासुर मर्दिनी को सिंदूर खेला के बाद विसर्जित किया जाता है। तो कहीं श्री राम की रावण पर विजय पर रावण, मेघनाथ, कुंभकरण के पुतले दहन किए जाते हैं। सबसे अनूठा 75 दिन तक मनाया जाने वाला बस्तर के दशहरे का रामायण से कोई संबंध नहीं है। अपितु बस्तर की आराध्या देवी माँ दन्तेश्वरी और देवी देवताओं की पूजा हैं।

मैसूर का दस दिवसीय दशहरा का मुख्य आकर्षण शाम 7 बजे से रात 10 बजे तक मैसूर पैलेस की रोशनी, सांस्कृतिक और धार्मिक कार्यक्रम और विजयदशमी पर दशहरा जुलूस और प्रदर्शनी है।

आज हर रामकथा के मूल में भगवान बाल्मीकि की रामायण है। : पहले महाकाव्य 'रामायण' के रचयिता महाकवि महर्षि वाल्मिकी जयंती आश्विन महीने की पूर्णिमा (9 अक्तूबर) को मनाई जाती है। जगह–जगह जुलूस और शोभायात्रा निकाली जाती है। लोगों में बहुत

ISSN No. 2581-3528

उत्साह होता है।

कंगाली बिहु (13 अक्टूबर) इस समय धान की फसल लहलहा रही होती है। लेकिन किसानों के खलिहान खाली होते हैं। इसमें खेत में या तुलसी के नीचे दिया जला कर अच्छी फसल की कामना करते हैं यानि यह प्रार्थना उत्सव है। भेंट में एक दूसरे को गमझा, हेंगडांग (तलवार) देते हैं। कोंगाली बिहू से ये भी युवाओं को समझ आ जाता है कि मितव्यता से भी उत्सव मनाया जाता है।

सौभाग्यवती महिलाएं पति की लम्बी आयु के लिए निर्जला करवाचौथ (13 अक्टूबर) का व्रत रखती हैं। महिलाएं श्रृंगार करके रात्रि को चंद्रमा को अर्घ्य देकर पति के हाथ से पानी पीतीं हैं और व्रत का पारण करती हैं।

अहोई अष्टमी (17 अक्तूबर) पुत्रवती महिलाएं पुत्र की लम्बी आयु और उसके सुखमय जीवन की कामना के लिये वह निर्जला व्रत रखती हैं। शाम को तारे को अर्घ्य देकर व्रत का पारण करतीं हैं। मेरी अम्मा ने परिवार में इस व्रत को पुत्र की जगह संतान के लिए कर दिया है। पोती के जन्म पर अम्मा ने भारती से व्रत यह कह कर करवाया कि बेटा बेटी में कोई फर्क नहीं है, यह व्रत संतान के अच्छे स्वास्थ्य के लिए करो। मेरी भाभी दोनों बेटियों शांभवी, सर्वज्ञा के लिये करती हैं। मेरी बेटी उत्कर्शिणी अपनी दोनों बेटियों गीता और दित्या के लिए करती है। 93 साल की अम्मा, दूसरी पीढ़ी में भी बेटियों के लिए अहोई का व्रत उत्कर्शिणी को रखते देख बहुत खुश हैं।

धनतेरस को खूब खरीदारी की जाती है। जिससे शुभ लाभ होता है और यह चार दिवसीय दीपावली का त्यौहार सब उल्लास से मनाते हैं।

दीपावली उत्सव धूमधाम से मिट्टी के दिए जलाकर मनाया जाता है। लक्ष्मी जी की पूजा खील बताशे से ही होती है ताकि गरीब अमीर सब करें, लेकिन मेवा, मिठाई खूब खाया जाता है।

दीपावली के अगले दिन पर्यावरण और समतावाद का संदेश देता, गोर्वधन पूजा अन्नकूट का उत्सव दुनिया के किसी भी कोने में रहने वाला कृष्ण प्रेमी परिवार या सामूहिक रुप से मनाता है। जिसमें 56 भोग बनते हैं।

यम द्वितीया का त्यौहर, भाई दूज (26 अक्टूबर) को है। मथुरा में बहन भाई यमुना जी में नहा कर मनाते हैं। कथा है सूर्यदेव की पत्नी संज्ञा की दो संताने यमी और यमुना हैं। यम ने अपनी नगरी यमपुरी बसा ली। वहां वह पापियों को दण्ड देने का काम करते थे। यमराज का ये काम यमुना को अच्छा नहीं लगता तो वह गोलोक चली गईं। यमराज और यमुना में बहुत स्नेह था। यमुना जी उन्हें बार–बार आने का निमन्त्रण देतीं, पर काम में बहुत व्यस्त होने के कारण, वे बहन का निमंत्रण स्वीकार नहीं कर सके। अचानक एक दिन उन्हें बहन की बहुत याद आई। उन्होंने यमुना जी को ढूंढने के लिए दूतों को भेजा, वे पता नहीं लगा पाए, फिर वे स्वयं ढूंढने आए। कार्तिक मास की शुक्ल पक्ष की द्वितीया को विश्राम घाट पर यमराज और यमुना का मिलन हुआ था। यमुना जी भाई को मिल कर बहुत प्रसन्न हुईं, उनके लिए स्वयं भोजन बनाया। यमराज बहन के व्यवहार से प्रसन्न होकर बोले कि वह उनसे कोई भी वरदान मांगे। यमुना जी ने छूटते ही मांगा कि जो नर नारी उनके जल में स्नान करें, वे यमपुरी न जाएं। सुनकर यमराज सोच में पड़ गये कि ऐसे तो यमपुरी का महत्व ही खत्म हो जायेगा। भाई को सोच विचार में पड़ते देख, यमुना जी बोली,''नहीं नहीं, जो बहन भाई आज के दिन यहां स्नान करेंगे या आज के दिन भाई, बहन के घर जाकर भोजन करेगा, उसे यमपुरी न जाना पड़े। यमराज तुरंत प्रसन्न होकर बोले,''ठीक है, ऐसा ही होगा।''

कहते हैं कि विवाह के बाद कृष्ण भी पहली बार सुभद्रा से यहीं मिले थे। भाई बहन का त्यौहार भइया दूज कहलाता है। भाई बहन के घर जाता है। बहन भाई का खूब आदर सत्कार करती है। भाई बहन को उपहार देता है।

सादगी, पवित्रता, लोकजीवन की मिठास का पर्व 'छठ' है। छठ पर्व में प्रकृति पूजा सर्वकामना पूर्ति, सूर्योपासना, निर्जला व्रत के इस पर्व को स्त्री, पुरुष और बच्चों के साथ अन्य धर्म के लोग भी मनाते हैं।

पौराणिक और लोक कथाओं में छठ पूजा की परम्परा और महत्व की अनेक कथाएं हैं। देवता के रुप में सूर्य की वन्दना का उल्लेख ऋग्वेद में मिलता है। सृष्टि पालनकर्ता सूर्य को, आरोग्य देवता के रुप में पूजा जाता है। भगवान कृष्ण के पौत्र शाम्ब को कुष्ठ रोग हो गया था। रोगमुक्ति के लिए विशेष सूर्योपासना की गई। एक मान्यता के अनुसार भगवान राम ने लंका विजय के बाद कार्तिक शुक्ल षष्ठी को सीता जी के साथ उपवास किया और सूर्यदेव की आराधना की। सप्तमी को पुनः सूर्योदय पर अनुष्ठान कर सूर्यदेव से आशीर्वाद प्राप्त किया था।

एक अन्य मान्यता के अनुसार छठ पर्व की शुरुआत महाभारत काल में हुई। कर्ण प्रतिदिन पानी में खड़े होकर सूर्यदेव को अर्घ्य देते थे। आज भी छठ में अर्घ्य देने की यही पद्धति प्रचलित है। इन सब से अलग बिहार, झारखण्ड, पूर्वी उत्तर प्रदेश और नेपाल के जन सामान्य द्वारा किसान और ग्रामीणों के रंगों में रंगी अपनी उपासना पद्धति है। सूर्य, उषा, प्रकृति, जल, वायु सबसे जो कुछ उसे प्राप्त हैं, उसके आभार स्वरुप छठ मइया की कुटुम्ब, पड़ोसियों के साथ पूजा करना है, जिसमें किसी पुरोहित की जरुरत नहीं है। घाट साफ सफाई सब आपसी सहयोग से कर लेते हैं। बिहारियों का पर्व उनकी संस्कृति है। छठ उत्सव प्रवासी अपने प्रदेश जैसा ही मनाता है।

चार दिन का कठोर व्रत नहाय खाय से शुरु होता है। सूर्य अस्त पर चावल और लौकी की सब्जी को खाता है। दूसरा दिन निर्जला व्रत खरना कहलाता है। शाम सात बजे गन्ने के रस और गुड़ की बनी खीर खाते हैं। चीनी नमक नहीं। अब सख्त व्रत शुरू होता है निर्जला व्रत, दिन भर व्रत के बाद सूर्य अस्त से पहले घर में देवकारी में रखा डाला (दउरा) उसमें प्रकृति ने जो हमें अनगिनत दिया है उनमें से इसे भर कर, डाला को सिर पर रख कर सपरिवार घाट पर जाते हैं। व्रती पानी में खड़े होकर हाथ में डाले के सामान से भरा सूप लेकर सूर्य को अर्घ्य देती है। सूर्यास्त के बाद सब घर चले जातें हैं, फिर सूर्योदय अर्घ्य के बाद व्रत का पारण होता है।

हिन्दू सनातन धर्म के तीज त्यौहार हमें पूजा–पाठ, उपहार देना, खरीदारी करना, भण्डारे करना, पण्डाल का भ्रमण एवं सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन व प्रतिभागिता का अवसर प्रदान करते हैं जिसमें सकारात्मकता के साथ सामाजिक समरसता का संदेश मिलता है।

(लेखिका, जर्नलिस्ट, ब्लॉगर, ट्रैवलर)

ISSN No. 2581-3528

भारतीय संविधान के सुविधाजनक व्याख्यान का कड़वा सच

मोहित कुमार

संविधान हम भारतीयों के दैनिक जीवन का हिस्सा है। यह न आग्रह की विषय वस्तु है, न ही विज्ञापन की। यह सभ्यता की अक्षुण्णता की विषय–वस्तु है। न्याय और न्यायपूर्णता उसका अविभाज्य अंग है। कम से कम उस अक्षुण्णता का तो ध्यान रखा ही जाना चाहिए। भारतीय संविधान को निशाना बनाने वालों के लिए बात कड़वी लगेगी। दरअसल, भारतीय वसुंधरा प्राकृतिक सौंदर्य, और धार्मिक तपस्थली है। भारत में युगो युगो से असंख्य साधु, संतों ने तपस्या कर जनकल्याण किया। आज भी भारतीय वातावरण में भक्ति भाव की खुशबू महकती है। भारत की प्रतिष्ठा को कुछ सियासी संगठन धूमिल करने में अपनी काबलियत प्रदर्शित करते है। राष्ट्र की अध्यात्मिकता के अनुसार ऐसे प्राणियों का भारत में रहना अनुचित है जो राष्ट्र की विरासत और मर्यादा को उछाल रहे हो। भारत जब गुलामी की जंजीरों में जकड़ा था, तो इसी माटी से पले कुछ वीर सपूतों ने अपना बलिदान देकर भारत माता के आंचल से कीचड़ साफ किया। आजाद भारत की महक में जीने का आनंद उठाया। क्या कभी सोचा है कि देश को अग्रेंजी शासन से मुक्ति कैसे मिली? उन वीर शहीदों को भूल रहे हो जिन्होंने आजादी दिलाने में अपना सर्वस्व बलिदान कर दिया। कितनी माताओं की गोद सूनी हुई, कितनी पत्नी विधवा हुई और कितनों ने अपने पिता को मरते देखा। वो क्रूर शासन जिससे हम पूरी तरह ग्रसित थे। भारत माता के वीर सपूतों ने संकल्प लिया और देश को स्वतंत्र वातावरण में बदल दिया। आज राजनीति चमकाने के चक्कर में इंसान अपने धर्म और कर्म को भूलता जा रहा है। राजनीति को व्यापार बनाकर उपयोग किया जाता है। जनता के साथ धोखा, राजनीति का प्रमुख सरोकार बन गया है। झूठ का मसौदा तैयार किया जाता है। वाह राजनीति! तूने कमाल कर दिया। भारत माता की रक्षा करने वालों पर सवाल दाग दिए जाते हैं। राष्ट्र प्रेम और राष्ट्रभक्ति का दिखावा करने वाले छलावा कर जाते हैं। अपराध और अपराधियों को बढ़ावा देने में सरकारें बड़ा उत्तरदायित्व समझती हैं। हिंदू और हिंदुत्व की छवि को बरगलाने की कवायद रची जाती है। हमारा भारत कैसा था और कैसा बन गया है। जहां विदेशी अक्रांताओं ने भारत की प्रतिष्ठा को निशाना बनाया है। राष्ट्र की महानता और प्रबुद्धता पर विचार करने की जरूरत है। देश की दशा–दिशा तय करने की जरूरत है। इस्लाम की कट्टरता को रोकने की आवश्यकता है। हम नए पड़ाव पर खड़े हैं आजादी के 75वें अमृत महोत्सव में संकल्प लें कि हम नए भारत का आगाज धर्म, कर्म, सत्यमेव जयते, सत्य अंहिसा परमो धर्मः से करेंगे। हमारी वसुंधरा पर "अतिथि देवो भवः व वसुधैव कुटुम्बकम" की धारणा को सर्वोच्च माना जाता है। संविधान की मर्यादा को कायम रखते हुए डॉ. भीमराव अंबेडकर और डॉ. राजेंद्र प्रसाद की यादगार को सलामत रखने पर काम करेंगे।

जब 'सच' की बात होती है, तो कई बार 'कड़वा' शब्द उसके पहले विशेषण के तौर पर जुड़ जाता है– 'कड़वा सच'। दुनिया के सबसे लंबे–चौड़े संविधानों में से एक भारतीय संविधान में मौलिक अधिकार का भी उल्लेख है, और मौलिक कर्तव्यों का भी। दुनिया भर के जिन भी संविधानों से प्रावधान, विचार और बाकी चीजें हमने अपने संविधान के लिए उधार ली हैं–उनमें से भी कई में इस तरह की बातें हैं। हमारे संविधान निर्माताओं ने निश्चित रूप से बहुत श्रम और शोध करके इस संविधान का निर्माण किया है। लेकिन शायद कई प्रश्न उस समय तक 'विजुअल रेंज' में नहीं थे।

संविधान सभा में किसने क्या कहा था–इस बहस में पड़ना विषय नहीं है। एक प्रश्न यह है कि क्या हमारे संवैधानिक मौलिक अधिकारों में यह भी प्रावधान है कि हमें संविधान के किस बिन्दु को स्वीकार करना है और किसे स्वीकार करने से हम इनकार कर सकते हैं? जैसे, मान लीजिए कि चोरी करने को मौलिक अधिकार मानने का अधिकार हो, और उसकी सजा वाले प्रावधान को नकार देने–नहीं मानने, मानने से इंकार कर देने का भी अधिकार हो। फिर क्या होगा? जो होगा, अंग्रेजी में होगा। शायद इसलिए कि देश की प्रजा को तो उसे न समझने का अधिकार होगा, न उस पर टिप्पणी करने का। जैसे एक बार अंग्रेजी में कहा गया था–संविधान के मूलभूत ढांचे को संविधान में संशोधन करके भी बदला नहीं जा सकता। और यह फैसला सुनाना, फैसला सुनाने वालों का मौलिक अधिकार है। माने यह संविधान का अपना मौलिक अधिकार हुआ। और संविधान के रखवालों ने एक और मौलिक अधिकार स्वयं को दे दिया। वह यह कि यह मूलभूत ढांचे वाला मौलिक अधिकार कब मानना है, और कब नहीं, यह भी उनका मौलिक अधिकार होगा। उदाहरण के लिए कॉलेजियम व्यवस्था किस तरह संविधान के मूलभूत ढांचे के अनुरूप है–यह सवाल खारिज करने का मौलिक अधिकार कॉलेजियम व्यवस्था ने स्वयं ही स्वयं को दिया हुआ है। एक और उदाहरण देखिए। हम यह तो अपेक्षा रखते हैं कि लोग संविधान के प्रति, न्यायपालिका के प्रति आस्था का भाव रखें, उसे ईश्वर तुल्य सम्मान दें। यह एक मौलिक अधिकार है। लेकिन साथ ही हम कोई ऐसा काम करना जरूरी न समझें, जिससे जन में विश्वास पैदा हो सकता हो, यह भी हमारा मौलिक अधिकार हो। हम तर्क की जगह कुतर्ककरें–यह एक मौलिक अधिकार होना चाहिए। और हमारे कुतर्क को तर्क की तरह सम्मान दिया जाए– यह भी मौलिक अधिकार होना चाहिए। हम दुनिया भर से पारदर्शिता की अपेक्षा रखें–यह एक मौलिक अधिकार होना चाहिए। लेकिन जब हमारे गंदे कपड़ों की सार्वजनिक धुलाई हो, तो लोग नाक–कान–मुख और आंखें बंद कर लिया करें– यह भी मौलिक अधिकार होना चाहिए। हमारी हर बात को जनता देववाणी माने–यह एक मौलिक अधिकार होना चाहिए। और हम सिर्फ उलझी अंग्रेजी के ऐसे साहित्य की रचना करें, जो किसी के अनुरूप न हो–यह भी मौलिक अधिकार होना चाहिए।

लेकिन समस्या यह है कि अब अनुवाद होने लगा है। जन की भाषा में। सिर्फ भाषा का नहीं, मन्तव्य का भी। संविधान हम भारतीयों के दैनिक जीवन का हिस्सा है। यह न आग्रह की विषय–वस्तु है, न विज्ञापन की। यह सभ्यता की अक्षुण्णता की विषय–वस्तु है। न्याय और न्यायपूर्णता उसका अविभाज्य अंग है। कम से कम उस अक्षुण्णता का तो ध्यान रखा जाना चाहिए। 'सच' के साथ 'कड़वा' शब्द विशेषण के तौर पर अकारण नहीं जुड़ता है।

(लेखक साधना प्लस न्यूज प्रड्यूसर, यूपी डेस्क के रिपोर्टर हैं)

ISSN No. 2581-3528

'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावना पर राष्ट्रवादी प्रपंच

डॉ. वेद प्रकाश शर्मा

विश्व में भारत देश की प्रखंड पहचान धार्मिक, सांस्कृतिक और कलात्मक उत्सवों से की जाती है। भारत देश की संस्कृति और सभ्यता दुनिया के लिए प्रेरणा का सबब है। 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावना से ओत–प्रोत होने के कारण ही, कालान्तर में भारत ने हर जाति और हर धर्म के लोगों को शरण दी और उन्हें सहज स्वीकार किया। भारत भूमि को तपोस्थली का दर्जा इसीलिए मिला है कि यहां की सभ्यता में सरलता, सहजता और निर्मलता का पवित्र धारा बहती है। हमारी भारतीय संस्कृति में प्रत्येक त्योहार को बड़े हर्ष उल्लास के साथ मनाया जाता है, त्योहार और उत्साह भारतीय संस्कृति में प्रेम, सौहार्द का प्रतीक एंव आदर्श माना जाता है। व्यापारिक नजरिए से देखा जाए तो साल में पड़ने वाले त्योहारों से भारतीय अर्थव्यवस्था को भी मजबूती मिलती है। इन सभी परापरंगत विचारों से परे कुछ कुकृत्य सोच वाले मानव राष्ट्र की प्रपंच लीला में अनदेखी करने में लगे हुए है।

इस कारण उनके मत की नींव ही जब बर्बरता, अन्याय, शोषण, अत्याचार तथा अनाचार आदि पर रखी गई है, तो वहां संस्कृति कैसे पनपती। सांस्कृतिक परंपराएं कैसे बनती। जबकि वे लूटमार, हत्या, अपहरण को ही अपना धार्मिक कृत्य मानते रहे हैं। इसी कारण उनके यहां सांस्कृतिक विरासत नाम की कोई चीज नहीं है, और जो सांस्कृतिक अवशेष प्रकट हो रहे हैं उन्हें भी वे अपनाने को तैयार नहीं हैं और न ही अपने इतिहास को स्वीकार करने को तैयार हैं क्योंकि वे इस संपन्न संस्कृति को नष्ट करना अपना धार्मिक कृत्य मानकर उनके पूर्व पुरुष उसे नष्ट करने को ही अपना धर्म मानते रहे हैं।

परंतु दूसरी ओर भारतवर्ष की संस्कृति सबके सुख की कामना करती रही है और इस सुख में सबकी मानवीय सम्मति को भी आमंत्रित करती रही है। ऊं सहनाववतु। सहनौ.... का उद्घोष भारतवर्ष की संस्कृति ने विश्व भर को दिया। संगच्छध्वम सनवद्धवम... हम सब एक साथ चले, एक साथ बोलें, हमारे मन एक हों। परन्तु हमारा संदेश हर प्राणी के साथ है। जब कि दूसरे मतों में यह केवल अपने मत के अनुयायियों के लिए है।

परंतु ये महाविचार उन लूटमार वाली संस्कृति के लोगों को कैसे रुचिकर लग सकता

है क्योंकि वह तलवार लेकर अपने सुख के लिए दूसरों को कष्ट ही नहीं, उनकी हत्या तक करने को सदा उद्यत रहे हो, उनके जहन में सदभावना कैसे पनप सकती है। परंतु एक सिद्धांत है कि सुख और सुंदरता जो सत्य हो और शिव हो सब के सब को स्वतः ही अपनी ओर आकर्षित करती है। यही कारण रहा कि पूर्व के देशों में ही नहीं पश्चिम के देशों में भी फिर से भारतीय सांस्कृतिक जागृत होने की लहर उठने लगी है। तुम भी खुश रहो और हम भी खुश रहें। यानि सब खुशहाल जीवन जियें। यह विचार फिर से आकर्षित करने लगा है। इसी कारण लोग भारतीय संस्कृति की ओर स्वतः ही आकर्षित होते चले आ रहे हैं।

उदाहरणार्थ मां शारदा के मंदिर की सीढ़ियां चढ़ने की सामर्थ्य जब मुस्लिम गायक में नहीं रही तो वह मंदिर के नीचे से अपनी स्वरांजलि से मां शारदा का गुणगान श्रद्धापूर्वक करता रहा। इसी कड़ी में अनेकों दूसरे लोग हैं जो अपनी प्राचीन भारतीय सांस्कृतिक धारा की ओर आकर्षित हो जाते हैं। पर यही कुछ दकियानूसी कट्टरवादी एवं अमानवीय लोगों को नागवार गुजरता है क्योंकि इससे उनकी दुकानदारी ठप पड़ती हुई प्रतीत होती है। इसीलिए वे समय–समय पर अपनी इस सोच को फतवा के नाम पर जग जाहिर करते हैं कि कोई भगवान गणेश की पूजा में क्यों सम्मिलित हुआ या कोई कावड़ लेकर क्यों आया या कोई अपने घर में राम जी गणेश जी को क्यों विराजित व स्थापित कर रहा है। इसे देखकर उनके तन बदन में आग लग जाती है क्योंकि इससे उनका अधिकार वादी सिद्धांत बाधित होता है और उनकी पोल खुलने का डर भी सताता रहता है।

असल में कसूर उनका नहीं उन्होंने तो यही सब पढ़ा, रटा और समझा है और उसको समझ कर ही यह जिम्मेदारी दी जाती है कि समाज में उन्हें केवल नफरत ही बांटनी है, नफरत के ही बीज बोने हैं, पारस्परिक भाई चारा ऊपर से कहना है, पर करना नहीं है, अपने आप को दूसरे यानी जो आप के मजहब के नही है उन से हर तरह से अलग रखना है। इसीलिए वे ऐसा करते हैं। वे केवल निर्बल औरतें, असहाय जन या गरीब गरबा पर ही ये अपने मानवीय सिद्धांत लादते हैं। कैसा आश्चर्यपूर्ण दोगलापन है। इसलिए आप यदि पढ़ लिखकर भी इन पर चलना चाहते हैं, तो सारे लिखे पर चलो, नहीं तो जहां जिस देश में रह रहे हो उसका उनके वासियों का उनकी संस्कृति का जो कि कभी तुम्हारी भी संस्कृति थी, उस सब का भी कभी सम्मान करके देखो कभी प्यार से रह कर देखो, कितना आनंद आएगा या प्यार नाम की चीज या दूसरों को सम्मान देने की बात आप कभी सीखेंगे ही नहीं, तो विश्व में कैसे शांति स्थापित होगी। यह अपने आप एक बड़ा प्रश्न है। उन के समाज के बुद्धिजीवी इस पर बिना डरे विचार करें तो देश में ही नही सम्पूर्ण विश्व में शांति स्थापित हो जाएगी। तब मानव जाति कितना सुकून महसूस करेगी। और आप भी कितना सुकून या शांति अनुभव करोगे। पर यह तभी होगा जब एक बार आप मानवीयता को अपनाकर देखेंगे।

(लेखक स्तंभकार हैं)

मीडिया सुर्खियां (21 अगस्त, 2022 - 20 सितम्बर, 2022)

21 अगस्त : दिल्ली में नई शराब नीति में घोटाले के आरोपों में घिरे डिप्टी सीएम मनीष सिसोदिया। सीबीआई ने सिसोदिया समेत 14 लोगों के खिलाफ लुक आउट सर्कुलर जारी किया।

22 अगस्त : असम के मुख्यमंत्री हिमंत बिस्वा सरमा ने राज्य के सभी मुसलमानों से अपील की है कि अगर उनके इलाके के मस्जिद में कोई नया इमाम या मदरसे में नया टीचर आता है तो उसकी सूचना पुलिस को अवश्य दें।

23 अगस्त : भारतीय वायुसेना ने पाकिस्तानी क्षेत्र में गलती से ब्रह्मोस मिसाइल दागने के आरोप में तीन कर्मियों को बर्खास्त कर दिया। आईएएफ ने कहा, 'ब्रह्मोस मिसाइल' को गलती से 9 मार्च 2022 को दागा गया था।

25 अगस्त : बिलकिस बानो दोषियों की रिहाई मामले में गुजरात सरकार को सुप्रीम कोर्ट ने नोटिस दिया है। सुप्रीम कोर्ट ने दोषियों की रिहाई को चुनौती देने वाली याचिका पर गुजरात सरकार से राय मांगी है।

26 अगस्त : फुटबॉल की सर्वोच्च संस्था फीफा ने अखिल भारतीय फुटबॉल संघ पर से निलंबन हटा दिया है। एआईएफएफ अब अंडर–17 महिला विश्व कप की मेजबानी करेगा, जो अक्टूबर में आयोजित होगा।

27 अगस्त : देश के 49वें मुख्य न्यायधीश के रूप में जस्टिट यूयू ललित ने ली शपथ।

28 अगस्त : नोएडा में सुपरटेक के ट्विन टावर्स को गिरा दिया गया। इसे गिराने में 3700 किलोग्राम से अधिक विस्फोटक का इस्तेमाल किया गया।

29 अगस्त : राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो की नयी रिपोर्ट के मुताबिक देश भर में महिलाओं के लिए सबसे असुरक्षित राष्ट्रीय राजधानी में पिछले साल हर दिन दो नाबालिग लड़कियों से बलात्कार हुआ।

30 अगस्त : झारखंड के दुमका में अंकिता नाम की लड़की की मौत के बाद से हालात तनावपूर्ण है। शाहरुख हुसैन नाम के एक लड़के ने अंकिता पर पेट्रोल छिड़कर कर आग लगा दी थी। जिसके बाद अंकिता कि इलाज के दौरान अस्पताल में मौत हो गई।

31 अगस्त : भारत में नेपाल के राजदूत शंकर प्रसाद शर्मा ने कहा कि नेपाल ने भारत की अग्निपथ योजना के तहत अग्निवीरों की भर्ती में नेपाल के लोगों के शामिल होने पर फिलहाल रोक लगा दी है।

02 सितम्बर : प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने केरल के कोच्चि शहर में पहले स्वदेशी विमानवाहक पोत 'आईएनएस विक्रांत' का जलावतरण किया, जो भारत के समुद्री इतिहास में अब तक का सबसे बड़ा जहाज है।

03 सितम्बर : इस्लामिक स्टेट से जुड़े ISKP का एंटी इंडिया एजेंडा एक बार फिर बेनकाब हुआ है। ISKP की मैगजीन 'वॉयस ऑफ खुरासान' में भारत विरोधी लेख लिखा गया है। जिसमें बिलकिस बानो केस का हवाला देकर भारतीय मुसलमानों को भड़काने की कोशिश की गई है।

04 सितम्बर : आदर्श ग्राम पंचायत पहल के तहत, बरेली जिले का भरतौल गांव उत्तर प्रदेश का पहला गांव बन गया है जहां हर घर में पीने के लिए आरओ पानी उपलब्ध है।

05 सितम्बर : विदेश मंत्री लिज ट्रस के कंजरवेटिव पार्टी के नेतृत्व की दौड़ में भारतवंशी पूर्व वित्त मंत्री ऋषि सुनक को हराने के साथ अब वह ब्रिटेन की अगली प्रधानमंत्री होंगी।

06 सितम्बर : उत्तर प्रदेश के बाराबंकी की एक जेल के हैरान कर देने वाली घटना सामने आई है। यहां जेल में 26 कैदियों के एचआईवी पॉजिटिव मिले।

07 सितम्बर : पाकिस्तान ने तबारक हुसैन को अपना नागरिक मानकर उसका शव स्वीकार लिया। पाकिस्तान के विदेश मंत्रालय ने कहा कि मृतक आतंकवादी तबारक हुसैन 'मानसिक रूप से विक्षिप्त' था।

08 सितम्बर : ब्रिटेन की महारानी एलिजाबेथ द्वितीय का 96 साल की उम्र में निधन हुआ। उनके निधन पर दुनिया भर के नेताओं ने शोक व्यक्त किया।

09 सितम्बर : प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने कर्तव्य पथ का उद्घाटन कर दिया है। यह सेंट्रल विस्टा प्रोजेक्ट का एक हिस्सा है।

10 सितम्बर : केंद्र सरकार की सिफारिश पर राष्ट्रपति द्रौपदी मुर्मू ने जम्मू–कश्मीर के गुर्जर मुस्लिम गुलाम अली को राज्यसभा के लिए नॉमनेट किया।

11 सितम्बर : द्वारका शारदा पीठ शंकराचार्य स्वामी स्वरूपानंद सरस्वती का निधन। वो 99 साल के थे।

12 सितम्बर : दिल्ली की एक अदालत ने AAP के विधायक अखिलेश पति त्रिपाठी और संजीव झा को 2015 में उत्तरी दिल्ली के बुराड़ी थाने में पुलिसकर्मियों पर हमला करने वाली भीड़ का हिस्सा होने का दोषी ठहराया है।

13 सितम्बर : अयोध्या मंदिर मस्जिद विवाद के पैरोकार रहे हाजी महबूब ने चेतावनी दी है कि अगर अयोध्या की तरह काशी में कुछ हुआ तो सही नहीं होगा। हाजी महबूब ने चेतावनी देते हुए कहा कि आरएसएस के साथ मिलकर हुकूमत अगर सब कुछ गलत करेगी, तो अब देश में खून खराबा के अलावा और कुछ नहीं है।

14 सितम्बर : उत्तर प्रदेश में निजी मदरसों के सर्वे कराए जाने के राज्य सरकार के फैसले पर मौलाना साजिश रशीदी ने विवादित बयान दिया है। मौलाना ने कहा कि वह मदरसों से अपील करते हैं कि नोटिस लेकर आने वाले सर्वे टीम का वे स्वागत 'चप्पल–जूते' से करें।

15 सितम्बर : बाबा रामदेव ने कहा कि पतंजलि उत्तराखंड की समृद्ध सांस्कृति और स्वास्थ्य की बेहतरी के लिए 1000 करोड़ रुपये से भी ज्यादा का निवेश करेगी।

16 सितम्बर : दिल्ली की भ्रष्टाचार निरोधक शाखा ने AAP विधायक अमानतुल्ला खान को पूछताछ के बाद गिरफ्तार कर लिया है। इससे पहले ACB ने उनके घर और उनके 5 अन्य ठिकानों पर छापेमारी की। 12 लाख रुपये और एक बिना लाइसेंस वाला हथियार बरामद किया।

17 सितम्बर : 70 साल बाद भारत में फिर से चीतों की वापसी हो रही है। देश में आखिरी बार चीते को साल 1947 में देखा गया था। भारत में लुप्त हो चुके इस जीव को नामीबिया से लाकर मध्य प्रदेश के कूनो नेशनल पार्क में पीएम मोदी ने उन्हें छोड़ा।

18 सितम्बर : कश्मीर में युवाओं को भड़काने के मामले में एक मौलवी समेत छह लोगों को गिरफ्तार किया गया है।

19 सितम्बर : श्री माता अमृतानंदमयी की मां दमयंतीयम्मा का निधन। वह 97 साल की थीं।

20 सितम्बर : कश्मीर में तीन दशकों के बाद आज पहली बार खुलेगा सिनेमा हॉल।

संयोजन : प्रतीक खरे

पत्रिका के सितम्बर अंक की समीक्षा

भारत के ज्ञान, चिंतन, शिक्षा, संस्कार व परंपरा के नायकों की स्मृतियों को समर्पित सितम्बर अंक जो यह दर्शाता है कि भारत विश्व गुरु था। इसमें पहला लेख डॉ. सुनिता शर्मा जी ने 'प्रथम गुरु आदि गुरु आचार्य वेदव्यास' पर लिखा है। 'विश्व की पहली कविता का पहला पुरुस्कार' शीर्षक के अन्तर्गत डॉ. बुद्धिनाथ मिश्रा ने मनीषी आदि कवि महर्षि वाल्मीकी जी की रचना का वर्णन किया है। "महान भारतीय गणितज्ञ भास्कराचार्य द्वितीय" पर पंकज जगन्नाथ जयस्वाल का लेख है। भारत की शिक्षा विश्व में सबसे बड़ा केन्द्र रही और इसकी खगोलिकी की परम्परा अति प्राचीन व उज्जवल रही। इन्हीं तथ्यों के साथ 'भारत के महान खगोलशास्त्री वराहमिहिर' पर ज्योति सिंह का लेख है। 'प्रथम योग गुरु महर्षि पतंजलि' पर सिद्धार्थ शंकर गौतम का लेख है। 'निपुण शिल्पकार और वास्तुकला विशेषज्ञः भगवान विश्वकर्मा' पर मोनिका चौहान का लेख है। भारत की आर्थिक संवृद्धि के व्यवस्थित सुशासन प्रणाली, ज्ञान व विज्ञान की अनूठी परम्परा एवं आदर्श संस्कृति के अमूल्य धरोहर 'आचार्य चाणक्य' पर प्रो. अखिलेश मिश्र का लेख है। आयुर्वेद के अन्मदाता 'महान सनातनी चिकित्सक महर्षि चरक' पर चंद्रशेखर सिंह का लेख है। भारत की प्रथम महिला शिक्षिका 'सावित्री बाई फुले' पर लेख लिखा है डॉ. प्रदीप कुमार जी ने। पहली महिला सर्जन 'डॉ. मुथुलक्ष्मी रेड्डी' के जीवन पर प्रकाश डाला है डॉ. प्रियंका सिंह ने। 'पर्यावरणविद् भारतीय ऋषि मुनियों के ज्ञान की अविरल धारा' के बारे में बता रही है डॉ. चारु कालरा। 'स्वाभिमान की भाषा हिन्दी' के अर्न्तगत कई सवालों की चर्चा वरिष्ठ पत्रकार, लेखक, साहित्यकार राम बहादुर राय जी के कुछ अंश प्रस्तुत कर रही है अनीता चौधरी। 'प्राचीन ज्ञानपीठ वल्लभी विश्वविद्यालय' पर प्रकाश डाला है। प्रो. हरेन्द्र सिंह ने। 'शिक्षक दिवस' के विशेष अवसर पर शिक्षकों के व्यक्तित्व, विनोद प्रियता, आदर्श, क्षमता व दक्षता जैसे गुणों पर प्रकाश डाला है श्री रामकुमार शर्मा ने।

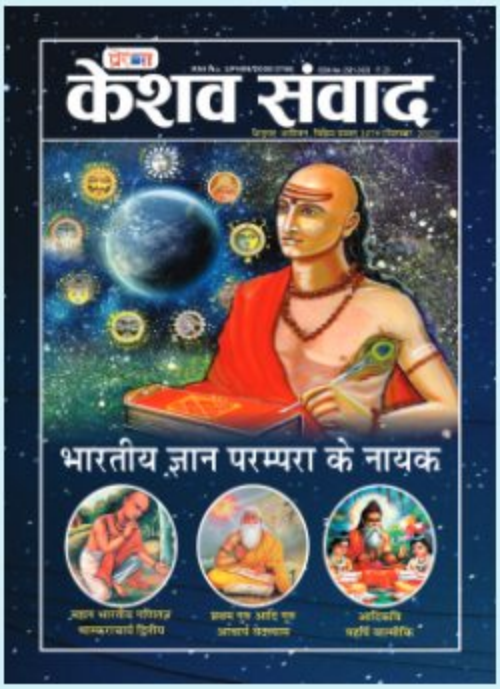

राजनीति में राष्ट्रीय विकास की समग्रता की आवश्यकता पर अपने लेख के माध्यम से जोर दिया है प्रो. अनिल कुमार निगम ने। 'कश्मीर घाटी की अपराजिता शिक्षाविद बेगम जफर अली जी' के जीवन पर प्रकाश डाला है डॉ. नीलम कुमारी ने। हिन्दी न केवल भारतीयता का प्रतीक है वरन् ज्ञान-विज्ञान की संवाहक है इन्हीं विचारों को अपने लेख में आत्मसात किया है डॉ. उर्विजा शर्मा ने। 'हिन्दी दिवस विशेष एवं कैसे हुआ कविता का उद्भव' पर प्रकाल डाला है डॉ. रविन्द्र शुक्ल ने। भारतीय संस्कृति के सन्देश वाहक 'आदर्श पत्रकार देवर्षि नारद' के व्यक्तित्व का वर्णन किया है अनुराग सिंह ने। उत्सव मंथन शीर्षक के अर्न्तगत विभिन्न उत्सवों जन्माष्टमी, ओणम, गणेशोत्सव के अनुभव साझा कर रही है सुश्री नीलम भागी। नाट्यकलाओं के अधिष्ठात्रा देव नटराज, उनकी मूर्तिमत्ता एवं भाव नाट्यविद्या के प्रकृति भाव को लेख के माध्यम से दर्शाया है डॉ. शैलेश श्रीवास्तव ने अंत में मीडिया सुर्खियों का संयोजन प्रतीक खरे द्वारा किया गया है।

संयोजन : डॉ. प्रियंका सिंह

सूर्या

आत्मनिर्भर भारत की पहचान

लाइटिंग | अप्लायेंसेस
पंखे | स्टील और पीवीसी पाइप

इनोवेशन, क्वॉलिटी और विश्वसनीयता हमारी पहचान।

सूर्या के प्रोडक्ट केवल पूरे भारत में ही उपलब्ध नहीं बल्कि पूरी दुनिया के 50 से अधिक देशों को निर्यात किए जाते हैं। कम्पनी सभी ग्राहकों की ज़िन्दगी रौशन करने तथा सभी से इनोवेशन, गुणवत्ता और विश्वसनीयता का वादा करती है।

सूर्या रोशनी लिमिटेड

ई–मेलः consumercare@surya.in | www.surya.co.in suryalighting surya_roshni

दूरभाषः +91–11–47108000, 25810093–96 | टोल फ्री नंबरः **1800 102 5657**